श्रमण परम्परा की रूप-रेखा

लेखक

जोधसिंह मेहता

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रमण परम्परा की रूप-रेखा

*

लेखक—जोधसिंह मेहता

*

प्रकाशन वर्ष—1978

*

मूल्य—4 रुपया

*

प्रकाशक—भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण समिति,
माउण्ट आबू

*

मुद्रक—अर्चना प्रकाशन,
1. काला बाग अजमेर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्राक्कथन

भारतीय संस्कृति के इतिहास में श्रमण संस्कृति का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। जिसे आज हम जैन-धर्म के नाम से जानते हैं वह इसी श्रमण धर्म का विकसित रूप है। श्रमण, निर्ग्रन्थ, अर्हत् आदि इस धर्म के प्राचीन नाम हैं। श्रमण का अर्थ है समभाव रखने वाला, पुरुषार्थ (श्रम) करने वाला तथा इन्द्रियों के विषयों का शमन करने वाला, ऐसे तपस्वी व साधक व्यक्ति का धर्म है—श्रमण धर्म। जिसके कोई ग्रन्थि (परिग्रह अथवा कषाय) न हो वह निर्ग्रन्थ है। वही अर्हत् (पूज्य) है। उसके द्वारा प्रतिपादित धर्म निर्ग्रन्थ अथवा अर्हत्-धर्म है। तीर्थंकरों की परम्परा बहुत प्राचीन है। भगवान् ऋषभदेव से भगवान् महावीर तक उसका विस्तार है। महावीर समय से आज तक श्रमण-परम्परा का बहुआयामी विकास हुआ है। अतः उसे किसी लघु-पुस्तिका में प्रस्तुत कर पाना संभव नहीं है। फिर भी श्रीमान् जोधसिंहजी मेहता ने श्रमण-परम्परा की रूपरेखा में जो सामग्री दी है वह प्रेरणास्पद है और इस सुदीर्घ परम्परा के कतिपय पक्षों की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित करती है।

श्रमण संस्कृति के प्रथम उद्घोषक भ. ऋषभदेव का समय आदि मानव सभ्यता का काल था। सिन्धु सभ्यता के अवशेषों में उनका अस्तित्व एवं ऋग्वेद तथा पटवर्ती साहित्य में उनका स्मरण इस बात का प्रमाण है। ऋषभदेव ने केवल निर्ग्रन्थ धर्म का उपदेश ही नहीं दिया था, अपितु अपने समय के मानव को लिपि, भाषा, साहित्य और कला आदि के ज्ञान से भी परिचित कराया था। इतिहास साक्षी है कि श्रमण परम्परा में धर्म और दर्शन के प्रचार के साथ-साथ अनवरत रूप से भाषा, साहित्य और कला का संरक्षण और प्रसार भी होता रहा है। इस महत्वपूर्ण थाती का आकलन व मूल्यांकन भारतीय व विदेशी विद्वानों ने अपने महत्वपूर्ण ग्रन्थों में किया है। स्व. डॉ. हीरालाल जैन की प्रसिद्ध पुस्तक "भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान", डॉ नेमिचन्द शास्त्री की पुस्तक "भ. महावीर और उनकी आचार्य परम्परा" (चार भाग), डॉ घोष द्वारा संपादित "जैन कला और स्थापत्य", पं. दलसुख मालवणिया, डॉ. मोहनलाल मेहता आदि विद्वानों द्वारा संपादित "जैन साहित्य का बृहत् इतिहास (भाग 6) आदि कुछ ऐसे ग्रन्थ हैं जो श्रमण-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परम्परा के बहुआयामी इतिहास का गहराई से मूल्यांकन करते हैं। यद्यपि प्रत्येक विधा और विषय पर भी स्वतन्त्र रूप से अनुसंधान हुआ है तथा कई अन्य, प्रामाणिक ग्रन्थ भी प्रकाश में आये हैं।

श्रमण-परम्परा में देश की प्रायः सभी भाषाओं में समय-समय पर साहित्य सृजन हुआ है। भगवान् महावीर ने तत्कालीन लोक भाषा प्राकृत (अर्धमागधी) में अपने उपदेश दिये थे। जैनाचार्यों ने तब से लेकर आज तक हजारों की संख्या में प्राकृत भाषा में ग्रन्थों की रचना की है। परिणाम-स्वरूप जैन धर्म के परिज्ञान के लिये प्राकृत भाषा अपरिहार्य हो गयी है। लगभग छठी शताब्दी से महाकवि स्वयम्भु ने अपभ्रंश भाषा में ग्रन्थ रचना आरम्भ किया और लगभग 16वीं शताब्दी तक जैनाचार्यों ने अपभ्रंश भाषा में हजारों ग्रन्थ लिख दिये। संस्कृत भाषा देश की टकसाली भाषा रही है। अतः न्याय-दर्शन, काव्य आदि के अनेक ग्रन्थ जैन मनीषियों ने संस्कृत में भी लिखे हैं। इन तीनों भाषाओं के लगभग दो तीन लाख हस्तलिखित ग्रन्थ जैन ग्रन्थ भण्डारों में आज सुरक्षित हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि श्रमण-परम्परा ने भाषा और साहित्य की कितनी लगन से सेवा की है। यही नहीं भारत की आधुनिक भाषाओं-गुजराती, राजस्थानी, मराठी आदि में भी विशाल जैन साहित्य लिखा गया है। दक्षिण भारत की अधिकांश भाषाओं के साहित्य का श्रीगणेश ही जैनाचार्यों की रचनाओं से हुआ है। तमिल भाषा का 'कुरल' एवं कन्नड़ भाषा में महाकवि पंप, रन्न आदि के ग्रन्थ इस बात का प्रमाण हैं।

भारतीय साहित्य की शायद ही कोई ऐसी विधा या विषय हो जिस पर जैनाचार्यों ने अपनी लेखनी न चलाई हो। पुराण, काव्य, कथा, नाटक आदि पर हजारों ग्रन्थ जैनाचार्यों द्वारा लिखित आज प्राप्त हैं। जैनाचार्यों ने अपने साहित्य में नैतिक आदर्शों एवं जीवन की उत्थान-मूलक प्रवृत्तियों को विशेष बल दिया है। जैन धर्म की उदार-मूलक एवं समन्वयवादी विचारधारा के कारण जैन साहित्य में न केवल जन-जीवन के पात्रों का चित्रण हुआ है, अपितु वैदिक विचारधारा के उन सभी प्रमुख देवी-देवताओं को भी कथा का अंश बना लिया गया है, जो जन-मानस में श्रद्धा और भक्ति के संबल थे। राम-कथा और कृष्ण-कथा का जैन साहित्य में इतना विस्तार हुआ है कि

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

उनके अध्ययन के बिना आज रामायण और महाभारत का अध्ययन पूरा नहीं माना जाता। यही स्थिति भारतीय गणित, ज्योतिष, आयुर्वेद, व्याकरण और कोष आदि के साहित्य के सम्बन्ध में भी है। इस दृष्टि से जैन साहित्य का अध्ययन-अनुसंधान होना अभी अपेक्षित है।

श्रमण परम्परा में भारतीय कलाओं का संरक्षण और संवर्धन भी प्राचीन समय से होता रहा है। भारतीय मूर्त्तिकला के मर्मज्ञ इस बात को स्वीकार करते हैं कि अब तक उपलब्ध सबसे प्राचीन मूर्त्ति जैन तीर्थंकर की ही है। खारवेल के शिलालेख से यह बात प्रमाणित होती है कि कुषाण युग में जिन बिम्ब का अच्छा प्रचलन था। मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त मूर्त्ति-कला में जैन कला का ही प्राधान्य है। गुप्तकाल की कला के अनेक निदर्शन देवगढ़ की जैन कला में उपलब्ध हैं। मध्ययुग में श्रवणवेलगोला, खजुराहो, देलवाड़ा, राणकपुर, बेलुर आदि स्थानों की जैन मूर्त्ति-कला अपनी कलात्मक और सुन्दरता के लिये विश्व-विख्यात है, केवल मूर्त्ति-कला के क्षेत्र में ही नहीं, मन्दिर-स्थापत्य कला की दृष्टि से भी जैन मन्दिर अद्वितीय हैं। सुदूर दुर्गम वनों और दुर्लंघ्य पर्वतों पर जैन मन्दिरों के निर्माण से भारतीय कला का संरक्षण ही नहीं हुआ, अपितु देश के विभिन्न भागों को सौन्दर्य प्रदान भी श्रमण परम्परा के द्वारा हुआ है। आज इस सांस्कृतिक-थाती की राष्ट्रीय स्तर पर सुरक्षा और प्रचार प्रसार की आवश्यकता है।

भारतीय चित्रकला के विकास में श्रमण परम्परा का अपूर्व योगदान है। जैन साहित्य में भित्ति-चित्रों के सम्बन्ध में विविध और विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। अजन्ता की चित्रकला के समकालीन तंजोर के समीप 'सित्तन्नवा-सल' की भित्ति-चित्रकला आज भी सुरक्षित है, जिसे एक जैन राजा ने बनाया था। यह स्थान 'सिद्धानां वासः' का अपभ्रंश प्रतीत होता है। एलोरा के कैलाश मन्दिर, तिरुमलाई के जैन मन्दिर तथा श्रवणवेलगोला के जैन मठ के भित्ति-चित्र भी प्राचीन चित्रकला के अद्भुत नमूने हैं।

जैन ग्रन्थ भण्डारों में ताड़पत्रीय एवं कागज पर बने चित्र भी अपनी कलात्मकता के लिए विश्वविख्यात हैं। मूडबिद्री में षट्खंडागम की सचित्र ताड़पत्रीय प्रतियाँ सुरक्षित हैं। पाटन में निशीथचूर्णि की ताड़पत्रीय प्रति में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पश्चिमीय चित्रकला के नमूने सुरक्षित हैं। बड़ौदा में ओघनिर्युक्ति की ताड़पत्रीय प्रति में 16 विद्यादेवियों के चित्र बने हुए हैं। इस तरह के अन्य दुर्लभ चित्र भी ताड़पत्रों के ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। इनके चित्रों को जैन कला, गुजराती शैली, अपभ्रंश शैली, जैन शैली आदि नाम दिये गये हैं। 14वीं शताब्दी के लगभग कागज और वस्त्रों पर भी जैन चित्र उपलब्ध होते हैं। कल्पसूत्र, कालकाचार्य कथा, सुपासणाहचरियं, यशोधरचरित्र, सुगन्ध दशमी कथा आदि अनेक ग्रन्थों की सचित्र प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं, जो भारतीय चित्रकला की बहुमूल्य निधि हैं। इन सबकी सुरक्षा की सुव्यवस्था जितनी आवश्यक है, उतनी जरूरी बात यह भी है कि भारतीय कला के मूल्यांकन व इतिहास लेखन में इन सब सामग्री का गहन अध्ययन के बाद उपयोग भी होना चाहिये। तभी भारत का सांस्कृतिक इतिहास सर्वाङ्गीण और प्रामाणिक हो सकेगा।

श्रीमान् जोधसिंहजी मेहता, 'रोवर स्काउटिंग', 'आदिवासी भील', 'चित्तौड़गढ़', 'आबू टू उदयपुर', 'प्रताप दी पेट्रीयट' और 'आबू-दिग्दर्शन' हिन्दी और अंग्रेजी आदि पुस्तकों के लेखक हैं। जैन साहित्य और कला के प्रचार प्रसार के प्रति उनकी विशेष अभिरुचि है। उसी का परिणाम है प्रस्तुत पुस्तक 'श्रमण परम्परा की रूपरेखा' इतने सीमित पृष्ठों में उन्होंने जो सामग्री दी है: उससे श्रमण-परम्परा के कई पक्षों की जानकारी पाठक को प्राप्त होगी। आशा है, श्री मेहता सा. की अन्य पुस्तकों की भाँति यह पुस्तक भी समाज और सुधी जनों में समादृत होगी।

गुरु नानक जयन्ती, 1977

—डॉ. प्रेमसुमन जैन
सहायक प्रोफेसर
प्राकृत संस्कृत विभाग,
उदयपुर विश्वविद्यालय

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दो शब्द

भारतीय चिन्तन व अध्यात्म के इतिहास में श्रमण एवं वैदिक विचारधारा प्रायः समानान्तर रूप से प्रवाहित हुई है। दोनों ने क्रमशः पुरुषार्थ और भक्ति के मार्ग को प्रमुखतः अपना कर मुक्ति के मार्ग का प्रवर्तन किया है। नैतिक गुणों और सदाचार की प्रतिष्ठा दोनों में है; किन्तु श्रमण परम्परा को जैन विचारधारा ने ध्यान और साधना के क्षेत्र में विशेष बल दिया है। यही कारण है श्रमण परम्परा में तपस्या और आत्मसाधना को अधिक प्रतिष्ठा है। श्रमण संघ और तपःपूत आचार्यों की अनवरत शृङ्खला है। श्रीमान् जोधसिंहजी मेहता ने अपनी इस लघु पुस्तिका 'श्रमण-परम्परा की रूपरेखा' में संक्षेप में श्रमण-परम्परा के उन्हीं आचार्यों एवं धर्मनिष्ठ व्यक्तियों का परिचय दिया है, जिन्होंने जैन संस्कृति के उन्नयन में अपना जीवन यापन किया है। श्री मेहता का यह लघु प्रयास पाठकों को श्रमण संस्कृति के विविध पक्षों से परिचित कराता है तथा प्रेरित करता है कि भारतीय संस्कृति को जानने के लिए श्रमण संस्कृति को गहराई से देखा, परखा जाय। श्री मेहता ने इस पुस्तक में पारम्परिक एवं ऐतिहासिक दोनों प्रकार की सामग्री का प्रयोग किया है।

वस्तुतः सामाजिक एवं ऐतिहासिक स्तर पर ही नहीं, अपितु भारतीय दर्शन के विकास के क्षेत्र में भी श्रमण संस्कृति के चिन्तकों ने महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। आत्मा के स्वरूप एवं उसके विकास की विभिन्न स्थितियों, ज्ञान के विभिन्न प्रकारों, प्रमाण और नयों का सिद्धान्त चर्चा में प्रयोग, ध्यान और योग की साधनाएँ तथा जगत् के वास्तविक स्वरूप का वैज्ञानिक विश्लेषण आदि के सम्बन्ध में तीर्थंकरों एवं जैन आचार्यों ने अपना गहन चिन्तन मनन प्रस्तुत किया है। उससे भारतीय दर्शन की विचारधाराएँ कब और कैसे प्रभावित हुई हैं, दोनों विचारधाराओं का समन्वित स्वरूप क्या उभर कर आया है, आदि के क्रमबद्ध इतिहास लिखे जाने की आवश्यकता है। तभी श्रमण परम्परा का वास्तविक स्वरूप उजागर हो सकेगा।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वर्तमान युग में सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में अनेक समस्याएं हैं। श्रमण परम्परा का इतिहास ही नित नई समस्याओं से जूझने का रहा है। अतः यह नितान्त आवश्यक हो गया है कि श्रमण संस्कृति की आचार मीमांसा, ज्ञान मीमांसा आज के युग में किस प्रकार अधिक सार्थक हो सकती है, इस पर गहराई से विचार किया जाय। वर्तमान में जैन परम्परा के उपासकों को क्या करणीय है, जिससे समाज और देश के विकास में उनका योगदान वर्णनीय हो सके, इस पर भी व्यावहारिक रूप से सोचने की आवश्यकता है। श्री मेहताजी ने अपनी इस पुस्तक में देश भर में 2500 वें निर्वाण वर्ष में किये गये कार्यों का विहंगमावलोकन भी किया है। उसका यही प्रतिपाद्य है कि हम आत्मलोचन कर आगे का मार्ग निर्धारित कर सकें।

डॉ० कमलचन्द सोगानी

रीडर एवं अध्यक्ष

दर्शन विभाग,

उदयपुर विश्वविद्यालय, उदयपुर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रस्तावना

कुछ वर्षों पूर्व, स्व. मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी विरचित 'भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा' का इतिहास पढ़ा था जिसमें भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा के श्रमणों के समय में, जैन धर्म के विकास का विविध विधाओं में जो अभ्युदय हुआ, उसका विद्वान् मुनिवर्य ने, अति कठिन परिश्रम करके सविस्तार विवरण दिया है। इस ग्रन्थ का दोनों भागों का गहन पठन पाठन और अध्ययन करने के पश्चात्, मेरे मन में भगवान् महावीर की परम्परा का इतिहास लिखने की भावना जागृत हुई और तदनन्तर, इस सम्बन्ध में कुछ पुस्तकें देखी, फिर भी, इस विषय पर प्रचुर सामग्री उपलब्ध होने पर, विशाल ग्रन्थ की रचना करना सम्भव न हो सका। भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समीप आने पर, यह भावना पुनः प्रबल हो उठी किन्तु आर्थिक संबल न मिलने के कारण, कुछ नहीं हो सका। इस पुनीत वर्ष में यह निश्चय किया कि भगवान् महावीर के 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव के उपलक्ष में श्रद्धाञ्जलि स्वरूप, भगवान् महावीर के निर्वाण के पूर्व और पश्चात्, जो श्रमण संस्कृति का प्रवाह रहा है, उसका सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन कर, श्रमण परम्परा की रूपरेखा ही प्रस्तुत की जावे। माउण्ट आबू पर संयोजित भगवान् महावीर की 2500 वीं निर्वाण महोत्सव समिति ने, इस विचार को पसन्द कर, इस लघु पुस्तक को प्रकाशित करने का निर्णय लिया जो पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

श्रमण संस्कृति अति प्राचीन है। जैन धर्म की मान्यतानुसार आदि में कितने ही जैन श्रमण तीर्थंकर, आचार्य, उपाध्याय, साधु और साध्वी एवं श्रमणोपासक श्रावक और श्राविकाएँ हो चुके हैं और आगे भी अनन्त ऐसे होयेंगे। श्रमण-संस्कृति तप-त्याग प्रधान संस्कृति है जो मोक्ष साधना में उपयोगी है। श्रमणों का जीवन विशुद्ध, अहिंसात्मक, तपोमय और लोकोपकारी होता है। वे न केवल अपनी आत्मा का उद्धार करते हैं, परन्तु समस्त प्राणीमात्र को अपने उपदेश और उदाहरण से, सिद्ध अवस्था प्राप्त कराने में सहायक होते हैं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वे कंचन और कामिनी के त्यागी होते हैं। सदैव आत्म चिंतन में रमण करते हैं और सांसारिक जीवों को भी इस पथ पर विचरण करने के लिये प्रेरित करते रहते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में, ऐसे निःस्वार्थी, त्यागी और परोपकारी श्रमणों और श्रमणोपासकों का परिचय दिया गया है जिन्होंने इस संस्कृति के सिद्धान्तों का प्रचार और प्रसार करके जैन धर्म का उज्ज्वल और उन्नत विकास किया है। इन महान् पुरुषों ने न केवल लोकोत्तर और लोकोपयोगी विविध विषयों पर विशाल ग्रन्थों का सृजन किया है; किन्तु वास्तु, स्थापत्य, चित्रकला एवं मूर्त्ति कला आदि कई क्षेत्रों में अनुपम योगदान भी प्रदान किया है।

श्रमणों ने अपने प्रवचनों से, बड़े-बड़े सम्राटों, राजाओं, महाराजाओं, राजनयिकों एवं साधारण जनता को जागृत कर, उनका आत्म कल्याण किया है। स्वयं श्रमण भगवान् महावीर ने श्रेणिक, चेटक, प्रद्योत, उदायन आदि राजाओं आनन्द और कामदेव आदि साधारण व्यक्तियों, चंदनबाला और मृगावती आदि सतियों और दलित समझे जाने वाले लोगों तथा चंदकौशिक नाग को प्रतिबोधित कर उनका उद्धार किया है। भगवान् महावीर की परम्परा में आचार्य सुहस्तिसूरि ने, सम्राट सम्प्रति को अपना अनुयायी बना कर, भारत के बाहर सुदूर प्रदेश में श्रमण संस्कृति का प्रचार किया है। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्यजी ने गुजरात के राजा कुमारपाल को परमार्हत श्रमणोपासक बना कर, सारे राज्य में अमारि (अहिंसा) का ऐसा जबर्दस्त डंका बजवा दिया कि यूक जूं तक मारना निषेध था, महा प्रभावक आचार्य श्री हरि विजय सूरिजी ने अपने वचनामृत से, सम्राट अकबर को श्रद्धालु बना कर, जीव हिंसा निषेध के कई फरमान (पट्टे और परवाने) जारी करवाये। इतना ही नहीं, बादशाह अकबर जैन धर्म से इतना प्रभावित हुआ कि मांस मदिरा से परहेज करने लग गया। आधुनिक समय में स्व. आचार्य श्री आत्मारामजी ने, जैन स्नातक श्री वीरचन्द राघवजी को, कुछ महिनों तक, इस संस्कृति का अध्ययन करा, शिकागो, अमेरिका की विश्व धर्म परिषद् में भेज कर, विश्व में जैन धर्म की ख्याति प्रकट की। इस प्रकार कई श्रमणों और श्रमणियों ने, कई आत्माओं का जीवन सफल कर श्रमण संस्कृति को सुदृढ़ और सबल

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

बनाया है। जिनका समावेश इस छोटी पुस्तक में करना सम्भव नहीं है। यहाँ पर इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि उन्होंने अपने सदुपदेश से कई लोकोत्तर और महान् लोकोपकारी कार्य सम्पादन कराये हैं जो आज भी सुवर्णाक्षरों में अंकित हैं।

राजाओं और महाराजाओं को छोड़ कर, जैन मंत्रियों और जैन श्रमणों ने, अपनी लक्ष्मी का अटूट सद्व्यय कर, संसार में अलौकिक जैन मन्दिर देलवाड़ा आबू, राणकपुर, श्रवण बेलगोला आदि निर्माण करवाये है जो भारत की ही नहीं किन्तु विश्व की अमूल्य निधि हैं। ये अनुपम मन्दिर आत्मोत्थान के अमर स्रोत तो हैं ही साथ ही साथ वास्तु और स्थापत्य कला के क्षेत्र में, भी अद्वितीय और अजोड़ हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में, भगवान् महावीर के पूर्व, प्रख्यात तीर्थंङ्करों और आचार्यों का सूक्ष्म वर्णन करते हुए, भगवान् महावीर के जीवन और उपदेश तथा उनकी परम्परा का 2500 वर्ष के इतिहास का सिंहावलोकन किया गया है इसके साथ भगवान् महावीर का 2500वाँ निर्वाण महोत्सव जो राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया, उसका भी संक्षिप्त वर्णन किया गया है। अन्त में, अर्बुद-गिरि (आबू पर्वत स्थित भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समिति के कार्य विवरण का भी समावेश किया गया है जिसके द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित की गई है।

स्थानाभाव के कारण, इस पुस्तक में, संभव है कि कुछ प्रभावक श्रमणों और श्रमणियों तथा श्रावक और श्राविकाओं का उल्लेख करना रह गया है, फिर भी आशा करता हूँ कि यह लघु पुस्तक, जैन इतिहास के जिज्ञासुओं के लिये परिचयात्मक और लाभदायक सिद्ध होगी और भविष्य में भी बृहद् इतिहास लिखने के लिए प्रेरणास्पद बनेगी। विषय की विशालता और गहनता को दृष्टि में रखते हुए, पुस्तक रचना में त्रुटियाँ और गल्तियाँ रहना संभव है। जिनको विद्वान् पाठक क्षमा करेंगे और भूल-सुधार के सुझाव देंगे तो उसकी आगामी संस्करण में क्षति पूर्ति की जा सकेगी। इस पुस्तक लिखने में, मुझे जिन ग्रन्थों और पुस्तकों से सहायता प्राप्त हुई, उसके प्रणेताओं और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

लेखकों का जिनकी संदर्भ ग्रन्थ-सूची परिशिष्ट में दी गई है, हृदय से आभार प्रदर्शित करता हूँ।

अन्त में, मैं डॉ. कमलचन्द सोगानी, रीडर दर्शन विभाग और डॉ. प्रेमसुमन, सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, उदयपुर विश्वविद्यालय को नहीं भूल सकता जिन्होंने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़ कर, कई विद्वतापूर्ण सुझाव देकर एवं यत्र तत्र पांडुलिपि में सुधार कर, इस पुस्तक को, सुन्दर और सुसंस्कृत रचना बनाने में सहायता प्रदान की है। डॉ. कमलचन्द ने इस पुस्तक पर दो शब्द और डॉ. प्रेमसुमन ने प्राक्कथन लिख कर महती कृपा की है जिसके लिए मैं उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। इस पुस्तक के प्रकाशक भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू का भी पूरा ऋणी हूँ जिसने इस पुस्तक को प्रकाशित करा, मेरे परिश्रम को सफल किया। पांडुलिपि का सारा टाइपिंग कार्य श्री रणजीतसिंह कर्मचारी, सेठ कल्याणजी परमानन्दजी पेढ़ी, देलवाड़ा ने कठिन मेहनत कर किया, उसको मैं अपनी ओर से धन्यवाद देता हूँ।

—जोधसिंह मेहता

कार्तिक कृष्णा अमावस्या
भगवान् महावीर निर्वाण कल्याणक, दीपावली पर्व
वीर संवत् 2503,
विक्रम संवत् 2034,
ईस्वी सन् 1977
देलवाड़ा, माउण्ट आबू

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नम्र–निवेदन

श्रमण संस्कृति का हमारे इतिहास में एक गौरवपूर्ण स्थान है। आज हम जिसे जैन धर्म के नाम से पुकारते हैं वह इसी श्रमण धर्म का विकसित रूप है। श्रमण निर्ग्रन्थ, अर्हत आदि इसी धर्म के प्राचीन नाम हैं। इस धर्म की परम्परा बहुत प्राचीन है। भगवान् ऋषभदेव से लगाकर श्रमण भगवान् महावीर तक इसका विकास हुआ है। भगवान् ऋषभदेव श्रमण संस्कृति के प्रथम उद्घोषक माने जाते हैं। उनका समय इतिहास की दृष्टि से आदि मानव सभ्यता का प्रारम्भिक काल था। इतिहास बताता है कि इस श्रमण परम्परा में न केवल धर्म और दर्शन का ही प्रचार हुआ वरन् भाषा, साहित्य, कला आदि का भी विकास हुआ। इस प्रकार भगवान् ऋषभदेव से लेकर आज तक के बहुमुखी विकास को प्राप्त इस श्रमण संस्कृति को एक लघु पुस्तिका में प्रस्तुत करना सर्वथा असम्भव मानते हुए भी भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समिति आबू पर्वत ने समिति के मंत्री, अनुभवी लेखक विद्वान् और श्रमण संस्कृति के ज्ञाता श्री जोधसिंह मेहता के माध्यम से यह छोटा सा प्रयास किया है, जो पाठकों के सामने है। इस समिति ने आबू पर्वत स्थित रमणीय नक्खी उद्यान में महावीर स्तम्भ लगवाकर स्थानीय नगरपालिका पुस्तकालय में महावीर कक्ष बनवाकर तथा अन्य छोटे-मोटे सार्वजनिक कार्य करवाकर इस महोत्सव को मनाया। यह प्रकाशन इसकी अन्तिम भेंट है। विद्वान् लेखक ने श्रमण परम्परा की रूपरेखा में जो सामग्री प्रस्तुत की है वह पाठकों के लिये प्रेरणादायक सिद्ध होगी, ऐसी हमें आशा है। समिति ने इस पुस्तक का सांकेतिक मूल्य 1 एक रुपया मात्र रक्खा है जिसकी आय से भगवान् महावीर स्तम्भ का रखरखाव व संरक्षण किया जावेगा। वह राशि सेठ कल्याणजी परमानन्दजी पेढी देलवाड़ा में जमा रहेगी, जो आवश्यकतानुसार संरक्षण हेतु खर्च की जा सकेगी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इस समिति की स्थापना श्री जोधसिंहजी मेहता, मंत्री की लगन, श्री कुशालसिंहजी गलूण्डिया, उपनिदेशक पर्यटन विभाग, राजस्थान, माउण्ट आबू अध्यक्ष के संचालन तथा स्वर्गीय श्री रामचन्द्रजी जैन, उपाध्यक्ष के मार्गदर्शन के कारण हुई थी। समिति के अन्य सदस्यों तथा आबू पर्वत के जैन भाइयों व दानी मानी महानुभावों ने भी इसके कार्यों को सुचारू रूप से चलाने में तन, मन, और धन से पूर्ण सहयोग दिया था। समिति के द्वारा सम्पादित कार्यों को अग्रसर करने तथा उन्हें सफल बनाने हेतु कल्याणजी परमानन्दजी पेढ़ी, सिरोही से भी हमें उचित मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। अतः इन सभी कार्यकर्त्ताओं तथा संस्थाओं को धन्यवाद देने में अपना पुनीत कर्त्तव्य मानता हूँ तथा इनके प्रति समिति का आभार व्यक्त करता हूँ।

अन्त में मैं इस पुस्तक के लेखक और समिति के मन्त्री श्री जोधसिंहजी मेहता का आभारी हूँ, जिनके परिश्रम व लगन तथा उत्साह के बिना न तो समिति आबू पर्वत पर सफलतापूर्वक कोई कार्य कर सकती और न ऐसी सुन्दर व उपयोगी पुस्तक की ही रचना हो सकती।

तेजसिंह गांगी
अध्यक्ष
भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण
महोत्सव समिति, माउण्ट आबू
व
सेवा निवृत्त प्रधानाचार्य, राजकीय एस. टी सी.
स्कूल, आबू पर्वत

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रमण संस्कृति की रूपरेखा

पूर्व परिचय :

भारतवर्ष में दो मुख्य संस्कृतियाँ—जैन श्रमण संस्कृति (जैन एवं बौद्ध) और वैदिक संस्कृति प्रधान मानी जाती है। इन दोनों संस्कृतियों ने, देश के आन्तरिक और बाह्य जीवन के विकास में, अनेक प्रकार से योगदान दिया है। इसमें से श्रमण संस्कृति अति प्राचीन और त्याग-प्रधान गिनी जाती है। एक समय, श्रमण संस्कृति सारे भारत में फैल गई और उस समय, इस संस्कृति के उपासकों की संख्या करोड़ों के आस-पास पहुँच गई थी। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। जैन धर्म का अधिकाधिक विस्तार राजा संप्रति के समय लगभग वीर संवत् 297 (विक्रम संवत् पूर्व 173-ईसा सन् पूर्व 230) में हुआ था। भगवान् महावीर ने भारत में अपना धर्म-प्रचार किया था परन्तु राजा संप्रति ने, देश के बाहर भी जैन धर्म का प्रचार और प्रसार किया था। यह बड़ी विपुल जनसंख्या, प्रभावशाली धर्म-प्रणेताओं और प्रचारकों के निर्मल अन्तर तप तथा त्याग की झाँकी कराती है।[1]

ऋषि और मुनि :

भारत और पाश्चात्य देशों के विद्वानों ने मुक्त-कण्ठ से स्वीकार किया है कि वेद पूर्व काल में, एक प्रगतिशील, समृद्ध और सर्वव्यापी श्रमण-संस्कृति थी जिसका उल्लेख वेदों, उपनिषदों और पुराणों में मिलता है। इन विद्वानों में डॉ. राधाकृष्णन्, डॉ. हर्मन जेकोबी, विन्सेण्ट स्मिथ आदि आते हैं। ऋषि और मुनि इन दो शब्दों को प्राचीन वैदिक साहित्य में, पर्यायवाची नहीं मानते हुए, भिन्न-भिन्न अर्थ में वर्णित किया गया है। ऋषि स्वभावत: प्रवृति-मार्गी होते थे और मुनि निवृति-मार्गी एवं मोक्ष-धर्म के प्रवर्तक होते थे। इन दोनों पक्षों को आजकल वैदिक मार्ग और श्रमण मार्ग शब्दों से सम्बोधित

1. भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला लेखक : स्व. मुनि श्री पुण्यविजयजी, प्रकाशक साराभाई मणीलाल नवाब, अहमदाबाद पृष्ठ सं. 1-2

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

किया जाता है। अतएव श्रमण संस्कृति (जैन संस्कृति और बौद्ध संस्कृति) और वैदिक संस्कृति, भारतीय संस्कृति की प्रमुख धाराएँ मानी जानी चाहिये। [1]

जैन संस्कृति के सिद्धान्त और प्रचार :

मोहन-जोदड़ो और हड़प्पा के टीलों के उत्खनन से, जो ध्यानस्थ मुनि की प्रतिमाएँ मिली हैं, उनसे श्रमण संस्कृति की प्राचीनता का पता चलता है। इस श्रमण संस्कृति के प्रचारक, चौबीस तीर्थङ्कर— भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान् महावीर हुए जिन्होंने असंख्य काल से जैन धर्म का प्रचार किया। भगवान् महावीर को आज भी "श्रमण भगवान् महावीर" कहा जाता है। इन तीर्थङ्करों ने, दया, करुणा, अहिंसा तथा सर्व-धर्म समानत्व (अनेकांत वाद या स्याद्वाद) की प्रवर्तना की जो श्रमण संस्कृति की अमूल्य निधि है।

भगवान् महावीर के पश्चात् इन 2500 वर्षों में उनके ग्यारह गण-धरों—गौतम सुधर्मा स्वामी आदि और चन्दन बाला आदि सती साध्वियों ने, भारत में जैन धर्म के सिद्धान्तों को फैलाया। बड़े-बड़े आचार्यों, उपाध्यायों और साधुओं एवं साध्वियों ने अनेकानेक राजाओं, महाराजाओं और साधारण जनता को उपदेश देकर उन्हें जैन धर्मानुयायी बनाया, कई जैन तीर्थों को स्थापित किया। प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड़ भाषाओं में जैन साहित्य लिखकर जैन भण्डारों में संग्रह किया। प्राचीन एवं अर्वाचीन जैन साहित्य इतना विपुल, विशाल और विस्तृत है कि शायद ही अन्यत्र इसकी तुलना की जा सके। ग्रन्थ भण्डारों के साथ-साथ चित्रकला, स्थापत्य, वास्तु-कला और लिपि कला का भी इस परम्परा में महान विकास हुआ। श्रमण वेलगोला, देलवाड़ा आबू और राणकपुर के अद्वितीय और अनुपम जैन प्रासाद विश्व में प्रसिद्ध हैं जिनकी समानता नहीं की जा सकती है। जैन धर्ममतावलम्बी

1. भगवान् महावीर स्मृति ग्रन्थ प्रकाशक-सन्मति ज्ञान प्रसारक मण्डल सोलापुर 1976, सर्वार्थ सिद्धी खण्ड : लेख "जैन संस्कृति की प्राचीनता"— एक चिन्तन लेखक— डॉ. मंगलदेव शास्त्री, पूर्व कुलपति संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, पृष्ठ 66-72.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

तप, तपस्या और तीर्थ यात्रा हेतु हजारों और लाखों रुपयों का सद्व्यय करके जैन सिद्धान्तों का अनुमोदन करते हुए जनोपयोगी सार्वजनिक कार्यों में भी अपना हाथ बँटा रहे हैं। इसका प्रत्यक्ष बोध महावीर के 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव (जो सन् 1974-75 में सारे देश और विदेश में मनाया गया) से, संसार को हुआ है।

प्रागैतिहासिक काल-चक्र :

जैन धर्म के प्रागैतिहासिक की ओर दृष्टिपात करते हैं तो यह ज्ञात होता है कि अति प्राचीन काल से जैन धर्म चला आ रहा है। इस मान्यता के अनुसार जैन धर्म में काल के दो भेद हैं—एक उत्सर्पिणी अर्थात् चढ़ता काल और दूसरा अवसर्पिणी काल अर्थात् उतरता काल। दोनों काल को जोड़ देने पर, वह 'काल-चक्र' कहा जाता है। एक काल-चक्र 20 कोडा कोडी सागरोपम[1] का होता है जिसमें असंख्याता समय बीत जाता है। भूत-काल में ऐसे कई काल-चक्र हो गये हैं और ऐसे कई एक भविष्य में होते रहेंगे। एक समय वर्तमान काल है और भूत, भविष्य और वर्तमान काल 'सर्व अद्धा काल' कहा जाता है।

तीर्थ और तीर्थङ्कर :

तारयतीति तीर्थ अर्थात् जो संसार समुद्र में तरा सके, उसे तीर्थ कहा जाता है। तीर्थ के दो प्रकार हैं—(1) जंगम और (2) स्थावर। जंगम में साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका आते हैं, जिनको चतुर्विध संघ कहा जाता है। ऐसे तीर्थ की स्थापना करने वाले को तीर्थङ्कर कहते हैं। 'तीर्थं करोतीति तीर्थङ्कर' अर्थात् जो तीर्थ को स्थापित करे वही तीर्थङ्कर कहलाते हैं। अनन्तान्त काल में, अनन्त चौबीसी तीर्थङ्कर हो गये हैं और अनन्त ऐसे तीर्थङ्कर हो जायेंगे। अतः जैन प्रातः अनन्त चौबीसी जिन तीर्थङ्करों की वंदना करते हैं।

---

1. दस कोटा कोटी (क्रोडा क्रोड) पल्योपम का एक सागरोपम होता है और पल्योपम की व्याख्या पृष्ठ 4 पर आगे दी गई है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रत्येक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल में 24 तीर्थङ्कर, 12 चक्रवर्ती, 9 वासुदेव, 9 प्रतिवासुदेव एवं 9 बलदेव होते हैं। इस अवसर्पिणी काल में जो 24 तीर्थङ्कर हो गये हैं उनमें प्रथम आदिदेव भगवान् ऋषभदेव और अन्तिम भगवान् महावीर आते हैं जिनके निर्वाण को 2500 वर्ष हो गये हैं। इसके पहले उत्सर्पिणी काल के 24 तीर्थङ्कर हुए उनमें पहले तीर्थंकर का नाम केवल ज्ञानी और अन्तिम का नाम सम्प्रति था। भविष्य की उत्सर्पिणी में प्रथम तीर्थङ्कर, राजा श्रेणिक (बिंबसार) का जीव होगा जो श्री पद्मनाभ स्वामी के नाम से प्रख्यात होंगे।[1] भविष्य को सत्य मानते हुए

1. भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास भाग 1—मुनि श्री ज्ञानसुन्दर जी पृ. 18 से 621।

पल्योपम यह शब्द जैन शास्त्र का है, पल्य + उपम = पल्योपम। पल्य यानी कुआ। जिसको कुए की उपमा देने में आवे उसको पल्योपम कहने में आता है। इस वस्तु को समझाने में एक कुए का उदाहरण (दृष्टान्त) देने में आता है वह इस प्रकार है—

एक योजन लम्बा, चौड़ा और गहरा ऐसा एक कुआ होवे अर्थात् चार गउ लम्बा, चार गउ चौड़ा और चार गउ गहरा ऐसा एक कुआ होवे। उसमें देवकुरु, उत्तरकुरु प्रदेश के आयु से सात दिवसीय युगलिक मनुष्यों के मुंडाये, हुए मस्तक माथे का एक से सात दिवस का एक-एक बाल के असंख्याते अति सूक्ष्म टुकड़े करके ठूंस-ठूंस करके कुए में ऐसी रीति से भरने में आवे कि इस भरे हुए कुए पर होकर चक्रवर्ती का छियानवे करोड़ पैदल लश्कर अर्थात् सारा सैन्य घूम जावे तो भी एक बाल जितनी इस कुए में जगह नहीं दीखे।

ऐसे इस कुए में से सौ सौ वर्ष में एक-एक बाल निकालते हुए और कुआ बाल से सर्वथा खाली होते हुए जो समय बीते, उसको 'एक पल्योपम' कहते हैं।

इस प्रकार असंख्यात वर्षों का एक पल्योपम होता है। करोड़ से करोड़ संख्या से गुणा करने से जो संख्या आवे उसको कोटा कोटी कहने में आता है। ऐसे दस कोटा कोटी पल्योपम का एक सागरोपम होता है और दस कोटा कोटी सागरोपम का एक उत्सर्पिणी अथवा एक अवसर्पिणी काल होता है और उत्सर्पिणी तथा अवसर्पिणी दोनों काल को जोड़ने पर, अर्थात् 20 कोटा कोटी सागरोपम का एक काल चक्र होता है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भारत में राजस्थान के उदयपुर नगर में, भावी तीर्थङ्कर श्री पद्मनाभ स्वामी का मन्दिर निर्माण हो चुका है जो आज तीर्थ रूप में माना जाता है।

प्रथम तीर्थङ्कर भगवान् ऋषभदेव :

शास्त्रीय परम्परा के अनुसार इस अवसर्पिणी के प्रथम आरा (काल-चक्र का एक भाग) में मनुष्यों की आयु पल्योपम की होती थी[1] और उनका शरीर तीन गउ (एक गउ करीब एक मील के बराबर) ऊँचा होता था और वे चौथे दिन भोजन करते थे और भोजन भी कल्प वृक्ष (चित्ररस नामक) से याचना करने पर मिल जाता था। ज्यों-ज्यों अवसर्पिणी काल बीतता गया, कल्प वृक्ष का प्रभाव भी मंद होता गया। उस समय विमल वाहन और उनकी स्त्री प्रियंगु, जम्बु द्वीप भरत क्षेत्र के दक्षिण खण्ड में, इस अवसर्पिणी के तीसरे आरा में पल्योपम का आठवाँ भाग शेष रहता था, तब उत्पन्न हुए जो प्रथम 'कुल-कर' कहे जाते हैं। इन कुल-करों की पीढ़ी में, 14 वें कुल कर नाभि राजा और मरुदेवा माता हुए जो भगवान् ऋषभदेव के माता पिता थे। उस समय युगालिया धर्म, प्रवर्तमान था अर्थात् युगल स्त्री और पुरुष एक साथ जन्म लेते थे। ऋषभदेव के समय में, कल्प वृक्ष के फल नहीं देने से, युगलियों में परस्पर कलह हो जाने के कारण, ऋषभदेव को प्रथम राजा स्थापित किया जिन्होंने युगलियों को गृहस्थ धर्म की शिक्षा दी। उनकी आयुष्य चौरासी लाख पूर्व की मानी जाती है।[2]

भगवान् ऋषभदेव का जन्म चैत्र कृष्णा 8 को हुआ। जब उनकी आयु एक वर्ष से कम थी तो प्रथम जिनेश्वर के वंश की स्थापना करने के लिए इन्द्र ने एक बड़ा ईक्षू (ईख यानी गन्ना) उनके हाथ में दिया जिससे इक्ष्वाकु

1. 'जैन दर्शन में काल नु स्वरूप' (गुजराती) सम्पादक श्री विजय-सूशीलसूरिजी की पुस्तक का हिन्दी भाषान्तर अनुवादकर्त्ता— जोधसिंह मेहता, पृ. 7 से 8।
2. 8400000 × 8400000 वर्षों से गुणा करते हुए जो संख्या आवे उसका नाम एक पूर्व होता है 'जैन दर्शन में काल का स्वरूप'। पृ. 6

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वंश भारत में चला ।[1] युगलियों को उपदेश देने के बाद, ऋषभदेव प्रभु ने दीक्षा ग्रहण की अर्थात् साधु बने । फाल्गुन कृष्णा 11 को पुरिमातल आधुनिक इलाहाबाद में, प्रभु को अनन्त केवल ज्ञान और केवल दर्शन सम्पन्न हुआ और माघ कृष्णा 13 के दिन, अष्टापद पर्वत पर 1000 साधुओं के साथ भगवान् ऋषभदेव को निर्वाण प्राप्त हुआ । भगवान ऋषभदेव के निर्वाण से 42 हजार 3 वर्ष साढ़े आठ मास अधिक इतना काल कम, एक सागरोपम कोटा कोटी बीतने पर, भगवान् महावीर ने निर्वाण पद पाया ।[2] इस मध्यावधि काल में 22 तीर्थङ्कर 2. श्री अजितनाथ, 3. श्री सम्भवनाथ, 4. श्री अभिनन्दन, 5. श्री सुमतिनाथ, 6. श्री पद्मप्रभु, 7. श्री सुपार्श्वनाथ, 8. श्री चन्द्रप्रभु, 9. श्री सुविधिनाथ, 10. श्री शीतलनाथ, 11. श्री श्रेयांसनाथ, 12. श्री वासुपूज्य, 13. श्री विमलनाथ, 14. श्री अनन्तनाथ, 15. श्री धर्मनाथ, 16. श्री शान्तिनाथ, 17. श्री कुन्थुनाथ, 18. श्री अरनाथ, 19. श्री मल्लिनाथ, 20. श्री मुनिसुव्रत, 21. श्री नमिनाथ, 22. श्री नेमिनाथ, 23. श्री पार्श्वनाथ हुए जिनका विस्तार से वर्णन, कालिकाल-सर्वज्ञ आचार्य श्री हेमचन्द्र—सूरिजी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'त्रिषष्टि-शलाका पुरुष-चरित्र' में किया है । 2 से लेकर 21 तीर्थङ्करों का काल प्रागैतिहासिक माना जाता है ।

ऐतिहासिक काल :

22 वें तीर्थङ्कर भगवान् नेमिनाथ का जन्म श्रावण शुक्ला 5 आगरा के पास शौरीपुर में हुआ था; वह बालब्रह्मचारी थे । जब इनका विवाह उग्रसेन राजा की पुत्री राजुलमति के साथ होने वाला था तो हरिन पशुओं की पुकार सुनकर करुणार्द्र हो गये और सारथी को कह कर विवाह के रथ को फिरवा कर प्रव्रज्या (दीक्षा) ग्रहण कर ली—श्रावण शुक्ला 6 को, इस अव-सर्पिणी काल में दुषमा सुषमा चौथा आरा बहुत बीत जाने पर गिरनार पर्वत पर प्रभु आषाढ शुक्ला ८ को मोक्ष पधारे । इनकी कुल आयु 1000

1. श्री हिन्दी जैन कल्प सूत्र-प्रकाशक श्री आत्मानन्द जैन महासभा पंजाब जालन्धर शहर, प्रथम संस्करण, सन् 1948 पाना 116 ।
2. वही, पाना 127.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वर्ष की थी। इनके पिता का नाम समुद्रविजय और माता का नाम शिवादेवी था। वसुदेव और कृष्ण इनके चचेरे भाई थे। महाभारत काल 1000 ईस्वी पूर्व माना जाता है और यही समय नेमि का ऐतिहासिक काल माना जाना चाहिये—वैदिक वाङ्मय में वेद पुराण के साहित्य में नेमि का उल्लेख देखने को मिलता है[1]।

23 वें तीर्थङ्कर श्री पार्श्वनाथ ऐतिहासिक महापुरुष माने जाते हैं, उनके समय में, उत्तर प्रदेश, विहार इत्यादि प्रान्तों में जैन-धर्म सुप्रचलित था, पौष विद 10 वि. सं पू 820 (ई. सन्, पू. 877) को जन्म वाराणसी (बनारस) में अश्वसेन राजा की वामा नाम की रानी की कुक्षि से हुआ था। श्री पार्श्व कुमार जब युवावस्था में थे तब नगर के बाहर कमठ तापस की धूनी में अपने अवधिज्ञान से काष्ठ में जलते हुए सर्प को देख लिया तो तापस को दया बिना-धर्म, को करने से मना किया, लेकिन वह नहीं माना, इस पर पार्श्व कुमार ने प्रत्यक्ष रूप में, यज्ञ काष्ठ की लकड़ी को तुड़वा कर, सर्प को बाहर निकलवाया। भगवान् पार्श्वनाथ, अहिंसा-श्रमण संस्कृति-के अनुपालक थे, इनका निर्वाण 100 वर्ष की आयुष्य पूर्ण होने पर सम्मेत शिखर (दक्षिण विहार से पार्श्वनाथ हिल) पर भगवान् महावीर के निर्वाण से 250 वर्ष पहले वि. सं. पू. 720 ई. सं. पू. 777 हुआ था, उनका धर्म चतुर्याम के नाम से प्रसिद्ध हुआ। पाली ग्रन्थों में इसका उल्लेख है। गौतम बुद्ध के चाचा बप्प शाक्य निर्गन्थ श्रावक थे। भगवान् महावीर के पिता सिद्धार्थ राजा भी, इसी परम्परा के अनुयायी थे। इस प्रकार, बुद्ध धर्म की स्थापना से पूर्व, श्रमण (निर्गन्थ) सम्प्रदाय काफी सुदृढ़ हो चुका था।

श्रमण भगवान् महावीर :

भगवान् महावीर का जन्म चैत्र शुक्ला 13 वि. सं. पू. 541 (ई. सं. पू. 598) बिहार के क्षत्रिय कुंड गांव में हुआ था; सिद्धार्थ राजा की त्रिशला क्षत्रियाणी की कुक्षि से जन्म लिया था, घर और नगर में धनादिक की वृद्धि होने से माता पिता ने इनका नाम 'वर्द्धमान' रखा और

1. "Jainism the oldest Living Religion : J. P. Jain P. 22

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इन्द्र ने प्रभु के विषय में यह जानकर कि वे बड़े उपसर्गों (कष्टों) से कंपायमान नहीं होंगे, 'महावीर' नाम धारण कराया, आठ वर्ष की आयु में आमल-क्रीड़ा की ओर एक मिथ्यादृष्टि देव ने, भयंकर भुजंग और फिर मनुष्य रूप बदल कर खेलते हुए प्रभु के धैर्य की परीक्षा की तो देव हार मान कर चला गया, 8 वर्ष पश्चात् प्रभु को निशाल (पाठशाला) पढ़ने को भेजा गया तो इन्द्र को जो ब्राह्मण का रूप कर आया था शब्द परायण व्याकरण कह कर बतलाई जो लोक में जैनेन्द्र व्याकरण के नाम से प्रख्यात हुई।[1]

यौवनावस्था प्राप्त होने पर, राजा समीर वीर की पुत्री यशोदा नाम की कन्या से विवाह हुआ और प्रिय दर्शना नाम की दुहिता हुई, जिसका विवाह जामाली के साथ हुआ। 28 वर्ष होने पर माता पिता अनशन कर स्वर्गवासी हुए। बड़े भाई नन्दी वर्धन के कहने पर दो वर्ष और गृहस्थावस्था में रह कर 30 वर्ष की आयु में, मार्गशीर्ष कृष्णा 10 वि.सं.पू. 511 (568 ई.स.पू.) को दीक्षा अङ्गीकार की और उसके साथ ही मनः पर्यव ज्ञान उत्पन्न हुआ। दीक्षा के बाद साढ़े बारह एक वर्ष पक्ष काल में ग्रामोग्राम विहार करते हुए और कठिन तपाचरण करते हुए नाना प्रकार के उपसर्ग सहन किये और ऋजु-वालुका नदी वाले जृम्भिक गाँव में, श्यामक नामक किसी गृहस्थ के क्षेत्र में, वैशाख शुक्ला 10 को चार घाती कर्म को तोड़ कर केवल ज्ञान प्राप्त किया। विहार काल में जघन्य उपसर्गों में कठपुतला का शीत उपद्रव, मध्यम उपसर्गों में संगम देव का काल चक्र छोड़ना और उत्कृष्ट उपसर्गों में प्रभु के कानों में कीले का उद्धरण था। साढ़े बारह वर्ष और 15 दिन यानि 4515 दिनों में 4166 तप दिन थे और शेष 349 पारणे (भोजन) के दिन थे। केवल ज्ञान होने पर ही वीतराग देव ने समवसरण में बैठ कर प्रथम देशना (उपदेश) दिया जिसका सार यह था कि कर्म बंधन रोकने के लिये, प्राणी की हिंसा नहीं करना, असत्य नहीं बोलना, अदत्त द्रव्य नहीं लेना, अनेक जीवों के उपमर्दन करने वाला मैथुन सेवन नहीं करना और परिग्रह धारण नहीं करना चाहिये। समवसरण के अवसर पर वेदों के पारगामी विचक्षण विद्वान् इन्द्रभूति

1. श्री हिन्दी जैन कल्प सूत्र : प्रकाशक श्री आत्मानन्द जैन महासभा जालन्धर शहर सन् 1948 पाना 61।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आदि ब्राह्मण भी अपने सैंकड़ों शिष्यों सहित आये जिनकी आत्मा सम्बन्धी विविध शंकाओं के निवारण होने के बाद वे अपने शिष्यों सहित दीक्षित हो गये। मुख्य अग्रगण्य पंडित ग्यारह थे जो गौतम सुधर्मादि के नाम से 11 गणधर कहलाये। उन्होंने वीर प्रभु से ध्रौव्य, उत्पादक और व्ययात्मक त्रिपदी सुनकर बारह अंग और बारहवें दृष्टिवाद के अन्तर्गत, चौदह पूर्व रचे। सुधर्मा गणधर को सर्व मुनियों में मुख्य बना कर, गण की अनुज्ञा दी, जिसके कारण, सुधर्मा स्वामी से भगवान् महावीर की साधु परम्परा अद्यावधि चली आ रही है। इसी प्रकार, साध्वियों में प्रभु ने चन्दना (चन्दन बाला) को प्रवर्तिनी पद पर स्थापित किया जिससे साध्वियों की परम्परा चली आ रही है।

भगवान् महावीर अपने केवल ज्ञान बाद 30 वर्ष और संसार में रहे और उस अवधि में 59 राजा जैनानुयायी बने और उसमें से कई एक राजा दीक्षा लेकर मोक्ष गये। प्रभु महावीर कौशांबी नगरी में मेंढक गाँव में पधारे तो गौशाल उनके ही दीक्षित शिष्य ने उन पर तेजो लेश्या छोड़ी किन्तु अरिहन्त पर तेजो लेश्या का असर नहीं होने से वह उसी के शरीर में प्रवेश कर गई और वह मृत्यु को प्राप्त हुआ। भगवान् महावीर ने अंतिम देशना अपापा नगरी में, राजा हस्तिपाल के यहाँ पर दी। समवसरण में उपदेश देकर उसी हस्तिपाल राजा के शुल्क दाण (शाला) में, वीर प्रभु ने वि. सं. पू. 470 (ई. सं. पू. 527) कार्तिक कृष्णा की अमावस्या की अर्द्ध-रात्रि को अपना शरीर छोड़ा और निर्वाण पद पाया। महावीर भगवान् की कुल आयुष्य 72 वर्ष की थी। भाव दीपक के उच्छेद होने पर, सब राजाओं ने द्रव्य दीपक किये जब से लोगों में दीपोत्सव (दीवाली) प्रवर्तमान हुआ। जिस स्थान पर प्रभु का अन्तिम संस्कार (दाह-क्रिया) की गई वह स्थान 'पावापुरी' कहलाई। वह आज भी महान् जैन तीर्थ माना जाता है। निर्वाण के पूर्व तीन दिन तक, महावीर भगवान् ने 9 राजा लच्छवी जाति के और 9 राजा मल्लवी जाति के कुल 19 देशों के राजाओं को अखण्ड प्रवाह से उपदेश दिया था।

भगवान् महावीर के उपदेश :

विश्वोपकारी वीर परमात्मा ने, संसार के समस्त प्राणियों को, बिना किसी जाति भेद-भाव के उपदेश दिये थे। उनके उपदेशों में, जगत् के स्वरूप

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

की व्याख्या, आत्मा और कर्म का विश्लेषण, आत्म विकास के मार्ग का प्रतिपादन, व्यक्ति और समाज के उत्थान पर बल एवं हिंसा अहिंसा का विवेक आदि का समावेश था। सबसे अधिक, उन्होंने अहिंसा का नारा बुलन्द किया। अतः वे 'अहिंसा के अवतार' माने जाते हैं। उन्होंने व्यक्त किया कि समस्त प्राणी जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। जीवन सबको प्रिय है। 'जीयो और जीने दो' उनका महान् सिद्धान्त था। आत्मा में कोई भेद नहीं है। 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' मानते हुए उन्होंने यही उपदेश दिया कि किसी प्राणी को कष्ट मत दो, किसी का तिरस्कार मत करो, पापी से नहीं पाप से घृणा करो। आत्मा से परमात्मा बनने के लिये पूर्णता प्राप्त करने के लिये, पांच महाव्रत—अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह--पालन करना आवश्यक है। उन्होंने यह भी शिक्षा दी कि सत्य सापेक्ष है। आपने जो देखा वह सत्य हो सकता है किन्तु दूसरे की दृष्टि बिन्दु से उसे देखना चाहिये और समझना चाहिये। यही उनके अनेकान्तवाद (स्याद्वाद) का सिद्धान्त है, जिसके उज्ज्वल आलोक से सत्य को देखना और परखना सिखलाथा।

भगवान् महावीर और समाज :

भगवान् महावीर ने व्यक्ति के पूर्ण विकास के लिये एक ओर जहाँ विश्वास का मार्ग प्रशस्त किया, वहाँ दूसरी ओर लोक कल्याण के लिये सामाजिक मूल्यों का भी सृजन किया।[1] समाज में ऊँच-नीच, छूआ-छूत, नारी-बंधन और दलित वर्ग शोषण को अहिंसा के प्रतिकूल बतलाते हुए मानव प्रतिष्ठा, नारी स्वतन्त्रता और समाजवाद का सच्चा और सही रास्ता दिखलाया। जमा खोरी, मुनाफा खोरी और संग्रहवृत्ति को हेय बतला कर अपरिग्रह का पाठ पढ़ाया। सांसारिक वस्तुओं के प्रति आसक्ति कम करके, अपनी जरूरत से ज्यादा वस्तुओं के त्याग करने की शिक्षा दी। हिंसा का ताण्डव नृत्य एक देश के साथ दूसरे देश का युद्ध, समाज के कलह-क्लेश, एक दूसरे के विचारों को समझने, सम्मान करने और समन्वय करने से मिट सकते हैं और सारे संसार में सुख तथा शान्ति का साम्राज्य संस्थापित हो सकता है।

---

1. 'भगवान् महावीर जीवन और उपदेश।' प्रकाशक········भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव महासमिति, उदयपुर राजस्थान। पृ. 27

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भगवान् महावीर की परम्परा का सूक्ष्म विवेचन :

बोद्ध साहित्य में, भगवान् महावीर को श्रमण न कहकर 'निर्ग्रन्थ' 'ज्ञातपुत्र' से संबोधित किया गया है। भगवान् महावीर तप, त्याग और संयम द्वारा आत्म शोधकार थे। उनकी परम्परा, सुधर्मा स्वामी से लेकर भद्रबाहु पर्यन्त वीर निर्वाण से 609 (वि. सं. 139—ई. सं. 82) वर्ष तक दिगंबर मतानुसार वी० सं० 603 (वि० सं० 133—ई० सं० 76) तक एक शासन में चली। तदनन्तर वस्त्र नग्नत्व के आधार पर, दो भेद श्वेताम्बर और दिगम्बर प्रारम्भ हुए। दिगम्बर साधु वस्त्र धारण नहीं करने से दिगम्बर और श्वेताम्बर वस्त्र रखने से श्वेताम्बर कहलाये। कालान्तर में, कुछ मत मतान्तर में अन्तर आया किन्तु वीर भगवान् के मूल सिद्धान्त आज तक दिगम्बर और श्वेताम्बर मानते हुए चले आ रहे हैं। वीर परमात्मा के निर्वाण से 2500 वर्ष में श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों जैन समाज के संप्रदायों ने एक साथ मिल कर, भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव मनाया जो इस आधुनिक युग की महान् उपलब्धि है। भद्रबाहु 12 वर्ष के दुष्काल पड़ने पर दक्षिण की ओर चले गये और यही कारण है कि प्रारम्भ में दिगम्बर मत दक्षिण की ओर अधिक विस्तृत हुआ। श्वेताम्बर मत विशेष कर बिहार, बंगाल, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान और मध्यप्रदेश तक सीमित रहा। आधुनिक काल में सारे भारत में यत्र-तत्र श्वेताम्बर और दिगम्बर बिखरे हुए हैं।

श्वेताम्बरों में भी वीर संवत् 1978 (वि. सं. 1508--ई.सं. 1451) में लोंका शाह ने लोंकामत (ढूंढिया मत) चैत्यवासी साधुओं के शिथिलाचरण देखते हुए मूर्त्ति पूजा को त्याग कर शास्त्रों के सिद्धान्तों पर चलाया जो मत आज 'स्थानकवासी' के नाम से प्रसिद्ध है। स्थानकवासी मुनि श्री रघुनाथजी के शिष्य श्री भीखणजी ने और आगे वी. सं. 2288 (वि. सं. 1818—ई. सं. 1761) में अपने गुरु से अलग होकर, तेरापंथ मत की स्थापना की जो आद्य आचार्य माने जाते हैं और 9 वें आचार्य वर्त्तमान अणुव्रत अनुशास्ता श्री तुलसी गणि है जिन्होंने तेरापंथ का सर्वोन्मुखी विकास किया है। तेरा पंथ का संगठन एक ही आचार्य के अनुशासन में चलता है जबकि श्वेताम्बर मूर्त्तिपूजक और स्थानकवासी समाज कई गच्छों, सिंघाड़ों

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

और संप्रदायों में बंट गया है। श्वेताम्बरों में 84 गच्छ मुख्य माने जाते हैं किन्तु आज तपागच्छ, खरतरगच्छ, अंचलगच्छ, त्रिस्तुतिक, पार्श्वनाथगच्छ आदि मूर्तिपूजक श्वेताम्बर गच्छ गिने जाते हैं। तपागच्छ की उत्पत्ति वी. सं. 1755 (वि. सं. 1285—ई. सं. 1228) में आचार्य जगच्चन्द्रसूरि से मानी जाती है। उदयपुर के पास आहाड में 12 वर्ष आयंबिल की तपस्या करने से तत्कालीन राणा जैत्रसिंह ने उनको 'तपा' का विरुद्ध दिया। उसके पूर्व जैन श्रमण निर्गन्थ, कौटिक, बडगच्छ आदि नाम से पुकारे जाते थे। इन मुख्य गच्छों के अतिरिक्त कई पेटा गच्छ—पूर्णिमा गच्छ, आगमिक गच्छ, चन्द्र गच्छ वी. सं. 1709 (वि. सं. 1239—ई. सं. 1182) नागेन्द्र गच्छ वी. सं. 1558 (वि. सं. 1088 – ई. सं. 1031) निवृत्ति गच्छ वी. सं. 1939, (वि. सं. 1469 ई. सं. 1412) पार्श्वनाथ गच्छ, मलधारी गच्छ, रायसेनीय गच्छ वी. सं. 1928 (वि. सं. 1458 ई. सं. 1401), यशसूरि गच्छ वि. सं. 1712 (वि. सं. 1242--ई. सं. 1185) है।

दिगम्बर मत के आचार्य श्रेष्ठ कुन्द-कुन्दा-चार्य से 'मूल संघ' की उत्पत्ति मानी जाती है किन्तु यह सन्देहास्पद बात है। पट्टावली के अनुसार, मूल संघ की स्थापना माघनन्दि ने की थी जो कुन्द-कुन्दा-चार्य के पहले हुए थे। ऐसा प्रतीत होता है कि मूल संघ की स्थापना ईसा की दूसरी शताब्दी में हुई थी जब कि दिगम्बर श्वेताम्बर दो भेद पडे। मूल संघ से 'बलात्कार संघ' निकला और उसके अर्हद्बली और माघ नंदि दिग्गज मुनि हुए थे। इस गच्छ से 'सरस्वती गच्छ' की उत्पत्ति हुई जो श्रुत (शास्त्र) की सम्यक् आराधना करने से श्रेष्ठ निर्गन्थ साधक समझे जाते थे। वी. सं. 1927 (वि. सं. 1457— ई. सं. 1400) में पद्मनंदि महान् माने जाते हैं। द्राविड संघ की स्थापना वी. सं. 1005 (वि. सं 535 - ई. सं. 478) में वज्र-नंदि ने मद्रास देश में की थी उस समय दुर्विनीत राजा राज्य करता था। वी. सं. 1223 वि. सं. 753—ई. सं. 696) में कुमार सेन ने काष्ट संघ काष्ट मय मूर्ति की पूजा अर्चना करने से नाम रखा। माथुर संघ मुनि राम सेन ने चलाया जो दक्षिण के मदुरा से सम्बन्धित है। दिगम्बर मत में चैत्यवासी यतियों की तरह, भट्टारक परम्परा भी चली आती है जिनकी मुख्य गादी चित्रकूट

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(चित्तौड़गढ़) और नागौर में थी। जैसे लोंका शाह ने श्वेताम्बरों में मूर्ति पूजा को अमान्य माना वैसे ही दिगम्बर परम्परा में तारण स्वामी (वी. सं. 1975 से 2042—वि. सं. 1505 से 1572 - ई. सं. 1448 से 1515) में मूर्त्ति को अमान्य घोषित किया। उन्होंने 'तारण-तरण' समाज की स्थापना की जो चैत्यालय (मन्दिर) के स्थान पर सरस्वती भवन और मूर्त्ति के स्थान पर शास्त्रों को विराजित करता है। वी. सं. 2200 वीं. (वि. सं. की 17 वीं.—ई. सं. की 17 वीं) सदी में भट्टारकों के विरुद्ध पंडित बनारसीदास ने शुद्धाम्नाय का प्रचार किया जो आगे चल कर, 'तेरह पंथ' के नाम से विख्यात हुआ और भट्टारकों का पुराना मार्ग 'बीस पंथ' कहा जाने लगा।

इस प्रकार भगवान् महावीर के निर्वाण के पश्चात्, जैन धर्म में कई भेद, मत, कुल, गण, गच्छ, संघ, पंथ, समयानुकूल होते गये, और विधिविधान में भी कई परिवर्तन आये। फिर भी 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव सर्वाधिक जैन संप्रदायों ने मिल कर, देश और विदेश में जैन धर्म के सिद्धान्तों और भगवान् महावीर के उपदेशों का प्रचार कर उल्लास पूर्वक मनाया, वह अभूतपूर्व और बेमिसाल है। मत मतान्तर और गच्छ भेद पर दृष्टिपात नहीं करते हुए वीर निर्वाण के बाद जो जैन धर्म का विकास और विस्तार हुआ, उसका उल्लेख संक्षिप्त में मुख्य घटनाओं के साथ किया जाता है।

भगवान् महावीर की परंपरा का 2500 वर्षों का सिंहावलोकन

वीर संवत् 1 से 1000

महावीर शासन का अभ्युदय पहले पूर्व देश में होकर उसका विकास अनुक्रम से उत्तर भारत और पश्चिम भारत तथा दक्षिण की तरफ हुआ और राजपुताना तथा गुजरात में विस्तृत हुआ। वीर संवत् की 10 वीं (विक्रम की 5 वीं सदी) में गुजरात में जैनियों का प्रसार प्रारम्भ हुआ और वीर संवत् की 17 वीं तथा 18 वीं (वि. सं. की 12 वीं तथा 13 वीं) सदी तक गुर्जर भूमि जैन धर्म का मुख्य स्थल बना।

वीर संवत् 1 (वि. सं. पू. 470 ई. सन् पू. 527) में जिस रात्रि को भगवान् महावीर का निर्वाण हुआ उस रात्रि के पिछले भाग में उनके प्रथम

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गणधर श्री गौतम स्वामी को केवल ज्ञान हुआ और वीर सं. 12 (वि. सं. पू. 458—ई. स. पू. 515) में वे मोक्ष पधारे।

1. प्रथम पट्टधर श्री सुधर्मा स्वामी (वी. सं. 1 से 20 तक वि, सं. पू, 470 से 450 ई. स पू. 527 से 507) इनके द्वारा प्रवर्तमान किया हुआ गच्छ का नाम 'निर्ग्रन्थ' पड़ा जो आठ पाट तक चला।

सुधर्मा स्वामी जैन शासन के समर्थ ज्योतिधर थे। हिंसा के निवारण के लिए भगीरथ प्रयत्न किया। इन्होंने 12 आगमों की रचना की। भगवान् महावीर और श्री सुधर्मा स्वामी के काल में, कोशी कोशल आदि 16 महा-राज्य लिच्छवी विदेही और मल्ल तीन गणतन्त्र राज्य थे। लिच्छवी से जुदा 9 संघों का एक संघ राजा था जिसकी राजधानी विशाला थी, जिसका मुख्य नायक महाराजा चेटक भगवान् महावीर के मामा थे। महाराजा चेटक और लिच्छवी राजा परम जैन थे। विदेही की राजधानी मिथिला थी। भगवान् महावीर ने 12 चातुर्मास विशाला में और 6 चातुर्मास मिथिला में किये। मध्य भारत में उस समय कुल मिला कर 7707 गण राज्य थे। वीर संवत् 1 में अवन्ती नगरी (उज्जैन) के चन्द्र प्रद्योत राजा के पौत्र पालक का राज्या-भिषेक हुआ और इस राज्य का वी. सं. 60 (वि. सं. पू. 410—ई. स. पू. 467) में उच्छेद होकर नव नन्द राज्य की स्थापना हुई जो वी. सं. 215 (वि. सं. 255-ई. स. पू. 312) तक चला। तत्कालीन पार्श्वनाथ संतानीय श्री केशी गणधर थे जिन्होंने महावीर स्वामी के शासन में प्रवेश कर अपने श्रमण संघ का नाम 'पार्श्वपात्य' रखा। इस गच्छ से वी. सं. 70 (वि. सं. 400-ई. स. पू. 457) के करीब उपकेशगच्छ का प्रादुर्भाव हुआ जिसके छठे आचार्य श्री रत्न प्रभु सूरि बड़े प्रभावशाली हुए। उनके उपदेश से राजा उहड़ और उनके मन्त्री ने जैन धर्म अंगीकार किया। वे ओसिया (उपकेशपुर) के थे जिससे 'ओसवाल' कहलाये। आचार्य श्री रत्न प्रभु सूरि ने 1 लाख 80 हजार व्यक्तियों को जैन बनाए और श्री-माल नगर (भिन्नमाल) में श्री-माली जैन बनाये। वी. सं. 84 (वि. सं. पू. 386-ई. स. पू. 443) में स्वर्गवास के बाद उनके शिष्य श्री यक्षदेवसूरि ने, अपने उपदेश से सम्भवतः बंगाल में जैन बनाये वे 'सराक' कहलाये जो आज भी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन धर्म के अनुयायी माने जाते हैं। भगवान् महावीर और सुधर्मास्वामी के समय में क्षत्रिय कुंड, ऋजु-बालुका, राज-गृही, पावापुरी, तीर्थ स्थल बने। सुधर्मास्वामी अपने 100 वर्ष का आयुष्य पूर्ण कर वीर निर्वाण से 20 वर्ष बाद (अर्थात् वि. सं. पू. 450-ई-स. पू. 507) मोक्ष गये। वी. सं. 84 (वि. सं. पू. 386-ई. स. पू. 443 ई.) का बरली शिलालेख मिला है जिसमें शिवी जनपद की राजधानी 'मध्यामिका' का जिक्र आया है। मध्यामिका चित्तौड़ से 7 मील दूर 'नगरी' आधुनिक नाम से विख्यात है और माध्यामिका तथा चित्रकूट (चित्तौड़) दोनों जैन धर्म के प्राचीन केन्द्र रहे हैं। पार्श्वनाथ परम्परा के 29 वें पट्टधर आ० देव गुप्तसूरि (पंचम वी. सं. 827 से 840 वि. सं. 357 से 370) के चतुर्मास के बाद, माघ शुक्ला 15 को एक विराट जैन सम्मेलन हुआ था, जिसमें कई श्रमण एकत्रित हुए थे और करीब 1 लाख जैन श्रावक श्राविकाएँ थी। चित्तौड़ के राजा वैरसिह भी सम्मिलित हुए थे।[1]

2. श्री जम्बु स्वामी (वी. सं. 20 से 64—वि. सं. पू. 450 से 406 ई. स. पू. 507 ले सं. ई. पू. 463) दूसरे पट्टधर माने जाते हैं। सुधर्मास्वामी के उपदेश से, ये जम्बुकुमार, आठ नवोढा विवाहित पत्नियों और विपुल धन (99 करोड़ सोना मोहर) छोड़ कर साधु बने। ये अंतिम केवली और अंतिम मोक्षगामी हुए हैं। वी. सं. 64 (वि. सं. पू. 406--ई. स. पू. 463) में मथुरा नगरी में इनका निर्वाण हुआ। ये चौदह पूर्वधर थे। उनके समय में, तत्कालीन राजा सम्राट् श्रेणिक (बिंबसार) कोणिक (अजातशत्रु), उदायी और श्रेणिक के पुत्र अभयकुमार विद्यमान थे। भद्रेश्वर तीर्थ कच्छ प्रदेश में तीर्थ स्थान माना जाने लगा।

3. श्री प्रभवस्वामी (वी.सं. 64 से 75-वि. सं.पू. 406 से 395--ई. सं. पू. 463 से 452) ने श्री जम्बुकुमार और उनकी आठ स्त्रियों के संवाद सुनकर, 499 चोरों के साथ जिनके ये सरदार थे, जैन धर्म में दीक्षा ग्रहण की। ये महान् युग प्रधान थे। त्याग, तपस्या और संयम के धोरी थे। उनके

1. मुनि ज्ञान सुन्दर : 'भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास'- जिल्द 1 पृष्ठ 785।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

समय में मगध के नन्द राजा के ब्राह्मण मंत्री कल्पक ने जैन धर्म अंगीकार किया। कल्पक के वंश में शकडाल या शकठल महामन्त्री बना। श्री—माल नगर, जहाँ से पोरवाल (प्राग्वाट) जैनियों की उत्पत्ति मानी जाती है, भिन्न-माल कहा जाने लगा। वी. सं. 70 (वि. सं. पू. 400 ई. सं. पू. 457) से ओसिया और कोरटा दोनों राजस्थान तीर्थ रूप में गिने जाने लगे।

4. आर्य श्री शय्यंभव सूरि (वी. सं. 75 से 98—वि. सं. पू. 395 से वि. सं. पू. 372—ई. सं. पू. 452 से ई. सं पू. 429) को जैन संघ ने, श्री प्रभवस्वामी के योग्य शिष्य न होने से, राजगृह के क्रिया-चुस्त ब्राह्मण को दीक्षित कर पट्टधर स्थापित किया। जब श्री शैय्यंभव सूरि ने दीक्षा ली तब उनकी स्त्री गर्भवती थी। पुत्र का जन्म होने पर, उसका नाम 'मनक कुमार' रखा गया जिसने अपने पिता की खोज कर उनसे दीक्षा ले ली। गुरु पिता ने बाल मुनि की आयु 6 महीने की शेष जानकर वी. सं. 82 (वि. सं. पू. 388--ई. सं. पू. 445) के लगभग श्री दशवैकलिक सूत्र की रचना की। यह सूत्र श्रमणों के लिये, साधु जीवन के पालने के लिये उपयोगी माना जाता है और स्वाध्याय में आज भी चलता है।

5. श्री यशोभद्र सूरि (वी. सं. 98 से 148—वि. सं. पू. 372 से 322—ई. सं. पू. 429 से 379) पाँचवें पट्टधर और

6. श्री संभूतिविजयजी (वी. सं. 148 से 156—वि. सं. पू. 322 से वि. सं. पू. 314—ई स. पू. 379 से ई. सं. पू. 371) छठे पट्ट-धर हुए और उनके बाद सातवें पट्टधर श्री भद्रबाहुस्वामी थे।

7. श्री भद्रबाहु स्वामी (वी. सं. 156 से 170—वि. सं. पू. 314 से वि. सं. पू. 300—ई. सं. पू. 371 से ई. स. पू. 357) विख्यात श्रुतज्ञानी हुए हैं जिन्होंने दशाश्रुत कल्प, कल्प-श्रुत (कल्प-सूत्र) और व्यवहार सूत्र की रचना की। ये चौदह पूर्व धारी थे और 'उपसर्गहरं स्तोत्र' के रचयिता है जो स्तोत्र जैन शासन के कष्टों के निवारण हेतु उपयोग में आता है और इसका पाठ भी किया जाता है। आधुनिक दिगम्बर विद्वान मानते हैं कि ये श्रुत केवली आचार्य भद्रबाहु, बारह वर्ष के दुष्काल पड़ने

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पर दक्षिण की ओर चले गये, परन्तु चन्द्रगिरि के पहाड़ पर पार्श्वनाथ बस्ती के कन्नडी शिलालेख से विवेचन मिलता है कि प्रथम भद्रबाहु दक्षिण में नहीं गये; किन्तु द्वितीय भद्रबाहु दक्षिण में पधारे।[1] आचार्य देवसेन सूरिजी वी. सं. 606 (वि. सं. 136—ई. स. 79) में श्वेताम्बर दिगम्बर भेद पड़ना मानते हैं और श्वेताम्बर मतानुयायी, आचार्य व्रज स्वामी के बाद वी. सं. 609 (वि. सं. 139—ई. सं. 82) में दूसरे भद्रबाहु के समय से मानते हैं।[2] दिगम्बर मत के अनुसार सुधर्मा स्वामी से भद्रबाहु की परम्परा में जम्बु, विष्णु, नन्दी, अपराजित गोवर्धन, को बीच में मानते हुए, उनका काल 162 वर्ष गिनते हैं। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही उन्हें श्रुत-केवली स्वीकार करते हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य राजा, भद्रबाहु के समकालीन माने जाते हैं। अन्तिम नंद राजा का उन्मूलन कर, चन्द्रगुप्त ने मगध देश पर राज्य स्थापित किया। अन्तिम अवस्था में राज-पाट छोड़ कर प्रभाचन्द के नाम से जैन साधु बने।[3]

8. श्री स्थूलभद्रजी (वी. सं. 170 से 215 वि. सं. पू. 300 से वि.सं.पू. 255; ई.सं. पू. 357 ई. सं. पू. 312) नवें नंद राजा के मंत्री शकटाल के पुत्र थे। गृहस्थपने में 4 मास वेश्या के घर में रहते हुए, अपने पिता की मृत्यु से, वैराग्य में तल्लीन होकर संसार छोड़कर सुधर्मास्वामी के शिष्य बन गये। ये दस पूर्व सार्थ और 4 पूर्व अर्थरहित जानते थे। उनके समय में 11 अंग तथा 14 पूर्व के ज्ञाता श्रमण पाटलीपुत्र पटना में, एकत्र हुए और उन्होंने कण्टस्थ आगमों को लिपिबद्ध करने का महत्तम प्रयास किया। ये जैन जगत में महान् कामविजेता माने जाते हैं जिन्होंने, गृहस्थ जीवन में कोशा वेश्या को रंगशाला में अपना चातुर्मास बिता कर, उसको प्रतिबोध किया। उन्होंने नंद वंश के अन्तिम राजाओं को भी जैन धर्म का उपासक बनाया चन्द्रगुप्त का स्वर्गवास वी. सं. 230 (वि. सं. पू. 240—ई. स. पू. 297)

1. जैन सिद्धान्त भास्कर पृ. 25
2. जैन परम्परानो इतिहास भाग पहलो : लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 315-316
3. Vincent Smith's History of India Pp. 9-146.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रौर राज्याभिषेक वी. सं. 215 (वि. सं. पू. 255—ई. स. पू. 312) माना जाता है श्रौर उनके पुत्र बिन्दुसार अमित्रकेतु का समय वी. सं. 235 (वि. सं. पू. 235—ई. स पू. 292) से वी. सं. 263 (वि. सं. पू. 207—ई. स. पू. 264) तक गिना जाता है।

9. आर्य महागिरीजी (वी सं. 215 से 235वि. सं. पू. 255 से वि सं. पू. 235, ई. स. पू. 312 से ई. स. पू. 292) ध्यानावस्था में रहते थे। 10 आर्य सुहस्ति सूरिजी (वी. सं. 245 से 291—वि. सं, पू. 255 से वि. सं. पू 179—ई. सं. पू. 282 से ई. स. पू 236) युग प्रधान आचार्य हो गये हैं जिनके समय में राजा संप्रति द्वारा (वी. सं. 291—292 से 323—वि. सं. पू 179—178 से वि. सं. पू. 147—ई. स पू 236—235 से ई. स. 204) जो कि कुणाल के पुत्र और अशोक के पौत्र थे, जैन धर्म का विश्व में प्रचार हुआ। ब्रह्मदेश, आसाम, तिब्बत, अफगानिस्तान, ईरान, तुर्की, अरब आदि देशों में जैनधर्म की पताका फहराती थी। आर्य सुहस्ति सूरिजी राजा संप्रति के गुरु थे। राजा संप्रति ने सवा लाख नवीन जैन मन्दिर, सवा करोड़ जिन बिंब एवं 95000 धातु की जिन-प्रतिमाएँ बनवाईं और 36000 मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया तथा 700 दानशालाएँ निर्माण कराई।[1] उन्होंने ईडरगढ़ पर प्रसिद्ध भगवान् शान्तिनाथ, 16 वें जैन तीर्थंकर के प्रसिद्ध मन्दिर को निर्मित करवाया जो आज तीर्थ माना जाता है। उन्होंने सिद्धगिरि (पालीताणा), सम्मेतशिखर, शंखेश्वरजी, नांदिया, बामणवाडजी के तीर्थयात्रा संघ भी निकाले और संघपति, विख्यात हुए। कर्नल टाड ने उन्हें जैनियों का शाहजहाँ कहा है। इनके पिता कुणाल, शांतजीवन व्यतीत करने के लिये (तक्षशिला) तक्षिला में रहते थे जहाँ उन्होंने जैन विहार बनाया जो तक्षिला के खंडहरों में आज भी कुणाल स्तूप के तरीके से विख्यात है। करीब सब प्राचीन जैन मन्दिर या अज्ञात उत्पत्ति के स्मारक, प्रतिमाएँ जन

---

1. भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास। भाग 1 मुनि श्री ज्ञान-सुन्दरजी पृ. 297।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्रुति के आधार पर संप्रति के निर्माण कराये हुए माने जाते हैं जो वास्तव में जैन अशोक समझा जाता था ।[1]

10, आर्य सुहस्ति सूरि के शिष्य आ० सुस्थित सूरि और आ० सुप्रतिबुद्ध सूरि थे जो कांकदी नगरी के निवासी होकर सगे भाई थे । इनका काल वी. सं 292 वि. सं पू 178 ई. स. पू 235 से माना जाता है । उन्होंने उदयगिरि की पहाड़ी पर कोटि करोड़ बार सूरि मंत्र का जाप किया जिससे भगवान् महावीर के श्रमण, निग्रंथ से कोटिकगच्छ प्रसिद्ध हुए ।

वी. सं. 330 (वि. सं. पू. 140-ई. स. पू. 197) के बाद खारवेल कलिंग देश का महान् प्रतापी जैन सम्राट हुआ जिसने श्री वलिस्सह आदि 207 जिनकल्पी साधुओं और 100 अन्य साधुओं, कुल 300 साधुओं को कुमारगिरि पर एकत्र कर जैन साहित्य का पुनरुद्धार किया[2] । यह हाल उड़ीसा के खण्ड गिरि पर स्थित दूसरी शताब्दी के शिलालेख में पाया जाता है कि खारवेल ने मौर्यकाल से नष्ट हुए अंग उपांग के चौथाई धाम का पुनरुद्धार किया था ।

वी. सं. 291 (वि. सं. पू. 179-ई. स. पू. 236) में आर्य सुहस्ति के स्वर्गवास के बाद आचार्य गुण सुन्दर जी को संघ का भार सौंपा गया, संप्रति की आ. गुण सुन्दरजी पर अगाध श्रद्धा थी जिसके कथन पर जैन संघ के लिये अविस्मरणीय कार्य किये गये । गुजराती इतिहास में लिखा है कि समूचा संप्रति साम्राज्य आ. गुणसुन्दरजी के इंगित पर संचालित होता था । यही कारण है कि उस समय देश अधिक से अधिक अहिंसा की प्रतिष्ठा कर सका । वी. सं. 335 (वि. सं. पू. 135 ई. स. पू. 192) में आ. गुणसुन्दरजी का स्वर्गवास हुआ ।

---

1. "Almost all ancient Jain temples or monuments of unknown origin are ascribed by the voice to Samprati, who is in fact regarded as a Jain Ashoka."

   Smith's Early History of India p. 202

2. जैन परम्परा नो इतिहास, भाग 1 लो । लेखक मुनि श्री दर्शन ज्ञानन्लाय विजयजी त्रिपुटी महाराज । पृ. 213

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन संघ में निगोद व्याख्याता कालकाचार्य एक महानतम व्यक्तित्व लेकर आये। दूसरे आचार्य उमा स्वाति ने जैन धर्म का प्रमुख ग्रंथ साहित्य, संस्कृत भाषा में सृजन कर, उसका नाम तत्त्वार्थ सूत्र रखा। यह जैन धर्म का सार-ग्रंथ कहा जा सकता है। तत्वार्थ सूत्र को श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों, सामान्य रूप से श्रद्धास्पद स्वीकार करते हैं। श्वेताम्बर मतानुसार इसका काल वी सं. 300 (वि. स. पू. 170 ई स. पू. 227) माना जाता है और दिगम्बर मत से वी सं. 101 वि. सं. पू 369 ई. सं. पू. 426 में इनको होना कहा जाता है। श्री नाथूराम प्रेमी ने मैसूर नगर तालु 146 शिलालेख से इन्हें यापनीय संघ का सिद्ध किया है। यह यापनीय संघ, दिगम्बर और श्वेताम्बर से भिन्न था जिसका आज तक भी अनुयायी नहीं है। यह संघ वी सं 675 से वी. सं. 20 वीं शताब्दी (वि. सं 205 से 16 वीं शताब्दी तक ई. स. 148 ई स की 15 वीं शताब्दी) तक चला।[1] किसी समय, कर्नाटक और उसके आसपास प्रदेश में, यह प्रभावशाली रहा है, कटम्ब, राष्ट्रकूट और दूसरे वंश के राजाओं ने इस संघ के साधुओं को अनेक भूमि दानादि किये थे। आचार्य हरिभद्र ने इसका अपनी ललित विस्तार ग्रंथ में सम्मान पूर्वक उल्लेख किया है। यापनीय संघ के मुनि नग्न रहते थे, मोर पिच्छी रखते थे, पाणी तल भोजी थे, नग्न मूर्तियां पूजते थे, ये बातें दिगम्बर संप्रदाय जैसी हैं परन्तु साथ ही वे मानते थे कि स्त्रियों को उसी भव में मोक्ष प्राप्त हो सकता है, केवली भोजन करते हैं। आवश्यक छेद सूत्र, नियुक्ति और देश वैकालिक आदि ग्रंथों का पठन पाठन करते थे। इस कारण से वे श्वेताम्बरियों के समान थे।[2]

आर्य सुहस्ति सूरि के बाद, पट्टधर के रूप में गणधर वंश में आचार्य सुस्थित सूरि की परम्परा आज तक चली आ रही है। उनके पट्टधर आचार्य इन्द्र दिन्न सूरि और आचार्य इन्द्र दिन सूरि के पट्टधर आचार्य आर्य दिन्न

1. जैन परम्परा नो इतिहास (भाग 1 लो) (गुजराती) : लेखक मुनि श्री दर्शन-ज्ञान-न्याय विजयजी--त्रिपुट महाराज पृ. 213

2. जैन साहित्य और इतिहास लेखक—पं. नाथूराम प्रेमी। पृ. 59

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सूरि हुए जिनके समय में दूसरे कालकाचार्य और हुए जिन्होंने अपनी बहन सरस्वती के साथ जैन दीक्षा ग्रहण की। सरस्वती साध्वी का अति रूपवती होने से उज्जैन के राजा गर्द मिल्ल ने अपहरण किया। कालकाचार्य ने ईरान से शाही राजाओं को बुलवा कर गर्द-मिल्ल को परास्त करा अपनी बहन साध्वी को छुड़वाकर प्रायश्चित देकर शुद्ध किया। शाही राजा जो शक कहलाये गर्द मिल्ल वी. सं. 453-466 (वि. सं. पू. 17—वि. सं. पू. 4, ई. सं. पू. 74—ई. सं. पू. 61) को हरा कर उज्जैन पर वि. सं. 466 से 470 (वि. सं. पू. 4 से वि. सं. पू. 1—ई. सं. पू. 61 से ई. सं. पू. 58) तक राज्य किया। शक संवत् भी उन्होंने चलाया था। तदनन्तर कालकाचार्य के भाणेज बलमित्र—भानुमित्र—अवन्तिपति बना जो विक्रमादित्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इन्होंने ही विक्रम संवत् चलाया जो वीर निर्वाण संवत् 470 (ई. स. पू. 57) की घटना है।[1] कालकाचार्य ने विक्रमादित्य प्रतिष्ठानपुर (पालनपुर) के राजा सात वाहन को और ईरान के शकों को प्रतिबोध कर जैन धर्म का उपदेश दिया। कालकाचार्य वी सं. 460 (वि.-सं. पू. 10—ई. स पू 67) के लगभग स्वर्ग सिधारे। राजा विक्रमादित्य ने शत्रुंजय का विशाल संघ निकाला जिन बिम्ब भराये और जैन मन्दिर भी बनवाये थे। तीसरे कालकाचार्य और हुए जिन्होंने प्रतिष्ठान पुर में सम्राट् शालिवाहन की विनती पर पर्युषण संवत्सरी भादवा शुद 5 से भादवा शुद 4 को कायम की जो आज भी मानी जाती है।[2] इनका समय वीर संवत् की पाँचवी सदी (वि. सं. 400 से 453 वि. सं. पू. 70 से वि. सं. पू. 17—ई. सं. पू. 127 से ई. सं. पू. 74) मानते हैं। कोई इनका समय वि. सं. 993 (वि. सं. पू. 523 ई. सं. पू. 466) मानते हैं। महाराजा विक्रम के उज्जयिनी की राजगद्दी पर आसीन

---

1. 'जैन परम्परा नो इतिहास'—भाग 1 लो लेखक : त्रिपुटी महाराज। पृ. 224 से 225
2. 'जैन परम्परा नो इतिहास' भाग 1 लो, लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 226-227

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

होने के आस-पास पश्चात आचार्य पादलिप्त सूरि हुए जो पैरों पर औषधियों का लेप कर आकाश में उड़ कर तीर्थ यात्रा करते थे। उनके नाम से उनके शिष्य नागार्जुन ने पालीताणा की स्थापना की।[1] ये महान विद्वान् कवि और प्रखर प्रतिभाशाली पुरुष थे। वीरात्, 436 (वि. सं. पू. 34-ई. सं. पू 91) में आर्य दिन्न सूरि के संयोजकत्व के आगमों की माथुरी वाचना हुई इसके पश्चात् आचार्य वज्रस्वामी, आचार्य सिंहसूरि के पट्टधर हुए जिनका युग प्रधान काल वी. सं. 548 से 584 (वी. सं. 78 से 114, ई. सं. 21 से 57माना जाता है। ये दश पूर्व ज्ञानी थे। इनको द्वितीय भद्र बाहु मान लें तो श्वेताम्बर दिगम्बर मतभेद मिट जाता है। उन्होंने जावड़ शाह को उपदेश देकर वी. सं. 590 (वि. सं. 120—ई. सं. 63) में शत्रुंजय तीर्थ का उद्धार कराया। व्रजस्वामी को आकाशगामिनिलब्धि प्राप्त थी और संघ को दुर्भिक्ष जानकर सुभिक्ष नगरी में लाये।

वी. सं. 500 (वि. सं. 30—ई. सं. पू. 27) के आस-पास आचार्य विमल सूरि ने प्राकृत में प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पउम चरियं' जैन रामायण की रचना की। आचार्य वज्र स्वामी के शिष्य आचार्य वज्रसेन सूरि (वी. सं. 584 से 620—वि. सं. 114 से 150, ई. सं. 57 से 93) हुए। उनके समय में फिर 12 वर्ष का दुष्काल पड़ने पर आचार्य वज्रसेन सूरि दक्षिण में सोपारक पधारे जहाँ पर सेठ जिनदत्त और सेठानी ईश्वरी के चार पुत्र 1. नागेन्द्र, 2. चन्द्र, 3. निवृत्ति व 4. विद्याधर ने वी. सं. 592 (वि. सं. 122—ई. सं. 95) में दीक्षा ग्रहण की। दुष्काल मिटने पर इन आचार्य के समय में मन्दसौर में तीसरी आगम वाचना आचार्य नन्दिल सूरि व आचार्य रक्षित सूरि स्वर्गवास वी. सं. 597 (वि. सं. 127—ई. सं. 70) के संयोजकत्व में हुआ। और आगमों को चार अनुयोग 1. द्रव्यानुयोग (दृष्टि-वाद) 2. चरणानुयोग (11 अंग, छेद, सूत्र महाकल्प उपांग, मूल सूत्र) 3. गणितानुयोग (सूर्य प्रज्ञप्ति चन्द्र प्रज्ञप्ति) और 4. धर्म कथानुयोग (ऋषि-भाषित उत्तराध्ययन) में विभाजित किया गया। आज इन अनुयोगों के प्रमाण से, आगमों का अध्ययन और अध्यापन होता है। दिगम्बर मतानुसार आचार्य

1. वही, पृ. 236 से 241

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अर्हद् वली ने आगमों का चार अनुयोग में विभाजन किया था। उपरोक्त आचार्य वज्रसेन सूरि के चार शिष्यों से चार कुल और उनसे पेटाभेद होते हुए 84 गच्छ हुए। आज जो श्रमण संघ विद्यमान है, वह कोडियगण और इसकी शाखा चन्द्र कुल का गिना जाता है। आ. स्कंदिल के समय में वी सं 830 (वि. सं. 360-ई. स 303) से वी. सं 840 (वि. सं. 370 ई.सं. 313) के बीच में चौथी वांचना मथुरा में हुई। वि. सं. 882 (वि. सं. 412-ई. स 355) से कुछ श्रमण चैत्य (जिन मन्दिर) में रहने लगे अर्थात् वनवास छोड़कर बस्ती में रहने लगे और धीरे-धीरे घरवासी बन गये। इस प्रकार दिगम्बर मुनि भी वनवास छोड़कर निसिहिया में रहने लगे और भट्टारक कहे जाने लगे। वी. सं. 833 (वि. सं. 363-ई. स. 306) के आसपास प्रसिद्ध आ. मल्लवादी हुए जिन्होंने नय चक्र--1000 श्लोक प्रमाण न्याय ग्रन्थ की रचना की। वी.सं. 974 (वि सं. 504-ई.सं. 447) के साल वल्लभीनगर में राजा शिलादित्य के आग्रह पर आ धनेश्वर सूरि ने शत्रुंजय माहात्म्य की रचना की। वी सं. 980 (वि. सं. 510-ई. सं. 453) में क्षमा-श्रमण देवर्द्धिगणि ने जैनागमों को, 500 जैनाचार्यों को वल्लभीनगर में एकत्रित कर आगमों को पुस्तकारूढ़ किये अर्थात् उनके मुख से अवशेष रहे हुए आगमों के पाठ को लिपि-बद्ध किया जिसकी अध्यक्षता आचार्य नागार्जुन ने की।[1] इन्हीं देवर्द्धिगण क्षमा श्रमण के समय जैन धर्म के सर्व शिरोमणि कल्पसूत्र की प्रथम वांचना गुजरात के आनन्दपुर में आ. धनेश्वर सूरि ने वहाँ के राजा ध्रुवसेन को, उनके इकलौते पुत्र की मृत्यु पर, शोक शमन के लिये की थी।

---

1 दूसरा मत यह भी है कि वी. सं. 830 से 840 (विक्रम सं. 360 से 370-ई. सं. 303 से 313) तक, आचार्य स्कंदिल सूरि ने मथुरा में और आचार्य नागार्जुन ने इसी समय में, वल्लभी में सर्व सम्मत आगम पाठ को पुस्तक रूप में लिखा। स्कंदिल सूरि आचार्य ने उत्तरापथ के जैन श्रमणों को और आचार्य नागार्जुन ने दक्षिण पथ के जैन श्रमणों को एकत्रित कर चौथी आगम वाचना की। 'जैन परम्परा नो इतिहास (भाग 1 लो) पृष्ठ 390-391।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

इसी काल में वी. सं. 9वीं या 10वीं सदी (विक्रम की चौथी या पाँचवीं सदी-ईस्वी सन् की भी चौथी या पाँचवीं सदी) में आ. सिद्धसेन दिवाकर हुए)। ये तर्क शास्त्र के मूल प्रणेता अर्थात् आद्यजैन तार्किक थे। ये बड़े दार्शनिक थे। उन्होंने 'न्यायावतार' संस्कृत में ग्रन्थ रचा और उसके बाद 'सन्मति तर्क प्रकरण' जो कि जैन साहित्य की अमूल्य निधि है और अनेकान्त का उज्वलन्त प्रमाण शास्त्र है, लिखा। इनकी अन्य रचना 'द्वात्रिंशिका' सर्वश्रेष्ठ और अति सुन्दर है। ये आद्य जैन कवि, स्तुतिकार और न्यायवादी माने जाते हैं। इनको भारतीय वाङ्मय की दिव्यतम ज्योति कहा जाता है। जैन धर्म का वीर संवत् की छठी शताब्दी अर्थात् विक्रम की पहली सदी (वी. सं. 470 से 570-वि. सं. 1 से 100-ई. सं. पू. 57 से ई. सं. 43) में जितना प्रचार हुआ उतना पहले नहीं हुआ। चन्द्रगुप्त, सम्प्रति, खारवेल के समय में जैन धर्म ने बहुत उन्नति की। साहित्य जगत में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। सिद्धसेन दिवाकर ने जैन-दर्शन का समन्वयवादी दर्शन के रूप में, विश्व को अमूल्य उपहार किया।[1]

वी. सं. 1001 से वी. सं. 2000 तक

वी. सं. 1010 (वि. सं. 540-ई. सं. 483) में मेवाड़ के राजा अल्लट का होना माना जाता है, जो उदयपुर से 2 मील आहाड़ में जाकर रहे। उनके वंशज 'आहाडिया' कहलाये जाने लगे। अल्लट के पूर्वज, भर्तृ-भट्ट के वंशज बाप्पा रावल थे। बाप्पा रावल ने चित्तौड़ पर मान मोरी को हरा कर वी. सं. 1036 (वि. सं. 566-ई. सं. 509 के लगभग) मेवाड़ का राज्य स्थापित किया था।[2] बाप्पा रावल के पूर्वज, वी. सं. 845 (वि. सं. 375-ई. सं. 318) में वल्लभी के भंग होने पर मेवाड़ आये थे और वल्लभी के राजा आद्य शिलादित्य के वंशज थे जिसमें से राजा गुहसेन-गुहिल (गुफा में जन्म होने से) के नाम से 'गहलोत' भी कहलाये। ये राजा

1. जैन धर्म का इतिहास-लेखक मुनि श्री सुशीलकुमार जी। पृ. 159 से 175
2. जैन परम्परा नो इतिहास (भाग 1 लो) लेखक त्रिपुटी महाराज। पृ.3४8

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन व बौद्ध हुए हैं और उनको 'परम भट्टारक व 'परम महेश्वर' कहते थे और ब्राह्मण सन्तानीय थे।[1] राजा भर्तृ-भट्ट ने भटेवर (जिला उदयपुर) में किला बनवाया तब आ. बुड्ढामणि ने भगवान आदिनाथ (ऋषभदेव) की प्रतिमा की प्रतिष्ठा कराई और जैन मन्दिर जहाँ मूर्ति प्रतिष्ठापित कराई उसका नाम 'गुहिल विहार' रखा गया।[2] इसी प्रकार राजा अल्लट ने भी आहाड में पार्श्वनाथ प्रभु की मूर्ति की प्रतिष्ठा सांडरेक गच्छ के श्री यशोभद्र सूरिजी के हाथ से कराई थी। वी. सं. 1055 से 1155 (वि. सं. 585 से 685-ई. सं. 528 से 628) के समय में श्री जिनभद्र गणि क्षमा श्रमण हुए जो क्षमा श्रमणों में एक निधान थे। ये सर्व विद्या विशारद और आगमों के वास्तविक अर्थ के ज्ञाता थे। उन्होंने वल्लभी राजा शिलादित्य के राज काल में श्री महावीर जिनालय में 4300 ग्रन्थ प्रमाण विशेषावश्य— भाष्य रचा जो जैन साहित्य में मुकुटमणि समान समझा जाता है। ये उत्कृष्ट व्याख्याता भी थे। वी. सं. 1270 (वि. सं. 800-ई. स. 743) के आस-पास आचार्य प्रद्युम्न सूरि हुए जिन्होंने अत्सु राजा की सभा में दिगम्बरों को वाद में हराया था एवं सपादलक्ष और त्रिभुवन गिरि आदि राजाओं को जैन धर्मी बनाया। इसी समय आ. मानतुंग सूरि ने 'भक्तापर स्तोत्र' भगवान् ऋषभदेव की स्तुति में रचा था जो जैन समाज में बहुत प्रतिष्ठित है। वी. सं. 1272 (वि. सं. 802-ई. स. 745) में आ. शीलगुण सूरी के उपदेश से गुजरात की राजधानी पाटण स्थापना होने के साथ साथ वहां पंचासरा पार्श्वनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर आद्य राजा वनराज ने निर्माण करवाया जिसके बाद श्रीमालों व पोरवालों का प्रभुत्व बढ़ता गया जो भिन्नमाल छोड़ कर पाटण में जा बसे। वी. सं. 1354 (वि सं. 884-- ई. सं. 827) में 'द्विसंधान' काव्य के कर्त्ता धनञ्जय महाकवि हुए और वी सं. 1354 वि. सं. 895—ई. सं. 838) में अपरिमित ज्ञानी अखण्ड ब्रह्मचारी व जैन धर्म प्रचारक आ. बप्पभटि का स्वर्गवास हुआ जिन्होंने ग्वालियर के आम राजा को प्रतिबोध किया। वी. सं. 1389 (वि. सं.

---

1 वही. पृ. 387।

2, 'Jainism in Rajasthan' D.r. K. C Jain, P. 29

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

919—ई. स. 862) में आचारांग वृत्तिकार शीलकाचार्य हुए उन्होंने 54 महापुरुषों का महापुरुष चरित्र लिखा और आचारांग सूत्र कृतांग पर टीकाएँ रची। आ. उद्योतन सूरि ने आबू की तलहटी के बीच टेलीग्राम के पास बड़ (वट) वृक्ष की छाया में आठ आचार्यों को दीक्षा दी। तब से वड़ गच्छ मशहूर हुआ और उन्होंने, बाणभट्ट की कादम्बरी के सदृश प्रांजुल तथा मंजुल 'कुवलय माला' प्राकृत का ग्रंथ रत्न की रचना की। इस ग्रन्थ की रचना जालोर में वी. सं. 1305 (वि. स 835 ई. स 778) में हुई।[1] यह कथाग्रन्थ भारतीय साहित्य का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। वी सं 1432 (वि सं. 962 ई स. 905) में आचार्य सिद्धर्षि ने 'उपमिति भव प्रपंच' नामक विशाल प्रतीकात्मक ग्रन्थ की रचना की जो भारतीय वाङ्मय में विशिष्ट स्थान रखता है, वल्कि विश्व साहित्य का पहला रूपक ग्रंथ है। यह ग्रन्थ भीनमाल (राजस्थान) में पूरा हुआ था।[2] वी. सं. 1460 (वि. सं 990 ई. सं. 931) में दिगम्बर आचार्य देवसेन भट्टारक हुए जिन्होंने मल्लवादी के नय-चक्र के आधार पर 'दर्शनसार' ग्रन्थ का निर्माण किया। उनका अस्तित्व काल वीर संवत् की 15वीं शताब्दी (विक्रम की 10 वीं शताब्दी) का माना जाता है। वी. सं. 1480 (वि. सं 1010-ई. स. 953) में बड़ गच्छ के देव सूरि ने चन्द्रावती में जिन मन्दिर निर्माण कराने वाले कुंकण मंत्री को दीक्षा दी। चन्द्रावती जिसके खंडहर आबूरोड से 4 मील की दूरी पर है उस समय समृद्धिशाली जैन नगरी थी। वीर संवत् की 16वीं शताब्दी (वि. स की 11वीं सदी) में धनेश्वर सूरि हुए जो कि त्रिभुवन गिरि के अधिपति थे। उस समय से चन्द्र गच्छ का नाम 'राजगच्छ' पड़ा, वी सं. 1499 (वि. सं 1029-ई. स 972) में मालवा के राजा मुंज के माननीय पंडित धनपाल हुए जिन्होंने 'तिलक मंजरी' संस्कृत साहित्य की अमूल्यमयी-मणि-संस्कृत आख्यायिका जैन सिद्धान्त के विचारों, तथ्यों और आदर्शों का अनुसरण कर लिखा, इसके अतिरिक्त उन्होंने 'देशी माला', 'ऋषभ पंचाशक', 'श्री महावीर स्तुति' 'महावीर उत्साह'

1 Jainism in Rajasthan by Dr. K. C. jain, P. 161

2 Ibid. P. 112

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आदि की भी रचना की। उनके भाई शोमन जैनमुनि थे जिन्होंने 'यमक-युक्त' चौबीस तीर्थंकारों की स्तुतियाँ लिखी हैं।

वी. सं. 1512 (वि. सं. 1042-ई. स. 985) में पार्श्वनाथ सूरि ने 'आत्मानुशासन' की तथा वी. सं. 1514 (वि सं. 1044-ई. स. 987) में मेवाड़ वासी दिगम्बर कवि हरिषेण ने 'धम्मपरिक्खा', महान ग्रन्थ की रचना की थी। वी. सं. 1554 (वि. सं 1084-ई स. 1027) में पाटण के राजा दुर्लभ ने जिनेश्वर सूरि को, दशवैकालिक सूत्र के प्रमाण से, चैत्यवासियों का जोर बढ़ जाने से, सही मार्ग सिद्ध करने पर खरतर उपनाम विरुद दिया, वी. सं 1558 (वि. सं. 1088-ई स. 1031) नवांगी टीकाकर अभयदेव सूरि की दीक्षा हुई और आबू देलवाड़ा के विमल वसहि प्रख्यात व अनुपम विश्व के कलाकृत मन्दिर की प्रतिष्ठा हुई। अभयदेव सूरि की 'नवांगी टीका' में 47 हजार श्लोक प्रमाण हैं और उसमें ज्ञान और चरित्र का अपूर्व सामंजस्य भरा हुआ है, वीर संवत् की 16 वीं शताब्दी (विक्रम की 11 वीं सदी) में श्वेताम्बर दिगम्बर आचार्यों ने विपुल और विस्तृत टीकाएं न्याय शास्त्र पर लिखी हैं। आचार्यों के पितामह सिद्धसेन दिवाकर माने जाते हैं, आ० मल्लवादी, आ० हरिभद्र देवसूरि दिगम्बर आ० अकलंक, आ० प्रभाचन्द आदि ने इस क्षेत्र में उत्कृष्ट साहित्य लिखा है। यह समय सोलहवीं शताब्दी का समय न्याय शास्त्र का विकास काल कहा जा सकता है।

सर्वाधिक साहित्य स्रष्टा आचार्य हरिभद्र सूरि

वीर संवत् की 13 वीं सदी (विक्रम की 8 वीं सदी में) स्व० मुनि जिनविजय जी विद्वान पुरातत्ववेत्ता के अनुसार, 1444 विविध जैन ग्रन्थों के रचयिता चौदह विद्यानिधान, समाज व्यवस्थापक, परम दार्शनिक विद्वान आचार्य श्री हरिभद्र सूरि हुए जो चित्रकूट (चित्तौड़गढ़) राजस्थान के निवासी थे, उन्होंने उस समय प्रचलित चैत्यवासी साधुओं के शिथिलाचार पर 'सम्बोध-प्रकरण' में बड़ा प्रहार किया है। याकिनी महत्तरा के धर्म-पुत्र कहलाते थे और आ० जिनदत्त सूरि के शिष्य थे। उन्होंने कथा साहित्य

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पर 'समराईच्च कहा' ग्रन्थ लिखा और जैन दर्शन का समन्वयात्मक दृष्टि-कोण से अवलोकन कर उसको पराकाष्ठा पर पहुँचाया। उन्होंने प्रत्येक दर्शन में रहे हुए सत्य का दर्शन किया अर्थात् स्याद्वाद दृष्टि रखी जैसे कि उनके द्वारा लिखित श्लोक में प्रगट होता है।

'पक्षपातो न मे वीरो, न देषः कपिलादिषु,
युक्तिमद् वचनं यस्य, तस्य कार्यः परिग्रह।"

पोरवालों को जैन धर्म में दीक्षित करने का श्रेय श्री हरिभद्र सूरि को है। पिटर्सन और भण्डारकर की रिपोर्ट के आधार पर तथा प्राचीन आचार्यों के मतानुसार उनका काल वी. सं. 1005 (वि सं. 535-ई स. 478) से वी. सं 1055 (वि सं. 585—ई स 528) के बीच का माना गया है किन्तु अब इन्हें विक्रम की 8 वीं शताब्दी का विद्वान निर्धारित किया है।

इसी समय दिगम्बर जैनाचार्य (जन्म- वी. सं 1275 शक संवत् 670-वि. सं 805 ई. स. 748 के लगभग) वीर सेन हुए जिन्होंने 'जयधवला' (60,000 श्लोक प्रमाण) और 'धवला' (72,000 श्लोक प्रमाण) पर टीकाएँ लिखी हैं तथा जिन सेन दिगम्बर आचार्य ने 'पार्श्वाभ्युदय' और 'आदि पुराण' (ऋषभ व 23 तीर्थंकरों के चरित्र-12,000 श्लो० परिमित) लिखा। इनका जन्म वी. सं. 1290 (शक संवत् 685-वि. सं. 820-ई. स. 763) के करीब माना जाता है। इसके अतिरिक्त दिगम्बर आचार्यों ने वी. सं. की 16 वीं सदी (विक्रम की 11 वीं सदी) में विशाल साहित्य प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में लिखा है।

वी. सं. 1550 (वि. सं. 1080-ई. स. 1023) में, आचार्य जिनेश्वर सूरि के भाई आचार्य बुद्धिसागर सूरि जो प्रतिभावान् और मर्मज्ञ श्रमण हो गये हैं, जाबालिपुर में संस्कृत भाषा में 7000 श्लोक परिमित एक 'पंच ग्रन्थी'[1] व्याकरण लिखी जिससे वे जैन समाज के वैयाकरण कहे जा सकते हैं।

1. Jainism in Rajasthan. Dr. K. C. Jain, P. 172

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

हेमचन्द्राचार्य और कुमारपाल :

वीर संवत् की 17 वीं सदी(विक्रम की 12 वीं सदी)में कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य हुए जिनका जन्म वी. सं. 1615 (वि. सं. 1145-ई. स. 1088) और स्वर्गवास वी. सं. 1699(वि. सं. 1229-ई.स. 1172)में हुआ था,ये प्रख्यात जैनाचार्य, विद्या के अनुपम भंडार और एक 'जंगम विश्व-विद्यालय' माने जाते हैं। उनका प्रभाव गुजरात के राजा कुमारपाल पर अत्यधिक था। राजा कुमारपाल जैन धर्म के महान् प्रचारक हुए और 'परमार्हत' उपाधि से प्रसिद्ध हुए, अपने राज्य में पूरी अमारि (जीव हिंसा निषेध) की घोषणा कराई यहाँ तक कि यूक (जूँ) मारना भी अपराध गिना जाता था। राजा कुमारपाल की विशाल हृदयता और आचार्य श्री की संस्कृति का प्रभाव, गुजरात की अस्मिता और भारतवर्ष के इतिहास में अमिट अलंकार के रूप में प्रसिद्ध रहेगी।[1]

हेमचन्द्राचार्य, अनेक ग्रन्थों के भी रचयिता थे। उन्होंने तीन कोटि करोड़ श्लोक प्रमाण साहित्य की रचना की। 'सिद्ध-हेम-शब्दा-नुशासन' नाम से असाधारण प्रतिभा पूर्ण नवीन व्याकरण के रचयिता थे। शब्दानु-शासन के साथ-साथ छन्दानुशासन, काव्यानुशासन और लिंगानुशासन की रचना की थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'कुमारपाल चरित्र' (प्राकृत), 'द्वाश्रय' महाकाव्य (संस्कृत) अभिधान चिंतामणि, त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र, योग शास्त्र, प्रमाण मीमांसा, अध्यात्मोपनिषद्, वीतरागस्तोत्र, 'सप्तसंधान, परिशिष्ट-पर्व आदि कई ग्रन्थों का निर्माण किया। पिटर्सन ने आचार्य हेमचन्द्र को ज्ञान का समुद्र कहा है।[2]

वीर संवत् की 17वीं (वि. सं. की 12वीं) सदी में विधि पक्ष प्रवर्तक आ. श्री जिनवल्लभसूरि हुए जिन्होंने चैत्य का त्याग कर नवांगीवृतिकार अभयदेवसूरि से पुनः दीक्षा ली। वी. सं. 1634 (वि. स. 1164—ई. स. 1107) में अपना काव्य संघ-पट्ट चित्तौड़ के जिन मन्दिर की दीवार पर

1 जैन धर्म का इतिहास, मुनि श्री सुशीलकुमारजी. पृ. 240

2 'Acharya Hemchandra is the ocean of knowledge. Peterson

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

खुदवाया। बागड़ की जनता—91,000 घरों के परिवार जनों को प्रतिबोध किया और राजा नरवर्मा को धर्मलाभ प्रदान किया। उन्होंने 'अष्टक शृंगार शतक' 'पिण्ड विशुद्धि प्रकरण' आदि ग्रन्थ भी लिखे। उनसे वी. सं. 1639 (वि. सं. 1169 ई. सं. 1112) में विधिपक्ष की उत्पत्ति हुई। वी. सं. 1644 (वि. सं. 1174-ई. स. 1117) में प्रसिद्धवादी देवसूरि हुए जिन्होंने सिद्धराज की सभा में दिगम्बरों को वाद में पराजित किया। राजा ने तुष्टि दान देना चाहा जो न लेकर उसको जिन मन्दिर में खर्च करवाया और उसकी प्रतिष्ठा भी की। वी. सं 1669 (वि. सं. 1199-ई. स 1142) वृद्धि (फलोधि) पार्श्वनाथ तीर्थ की स्थापना हुई जिसकी प्रतिष्ठा भी वी. सं. 1674 (वि सं. 1204-ई. स. 1147) में फलोधि और आरासण में आ. देवसूरि के कर कमलों से हुई। उन्होंने न्यायशास्त्र का महान् ग्रंथ स्याद्वाद्‌रत्नाकर लिखा था।

आचार्य जिनदत्त सूरि नाम के प्रभावक आचार्य खरतरगच्छ के हुए हैं जो सारे देश में 'दादा साहब' के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने लक्षाधिक राजपूतों को जैन बनाए। ये दिव्य शक्तिधर, चमत्कारिक और सिद्ध के रूप में प्रतिष्ठित पुरुष हुए हैं। उनकी रचनाएँ 'गणधर सार्ध शतक' 'चर्चरी' 'गणधर सप्तति' और 'सन्देह दोहावली' मुख्य मानी जाती है। उनका स्वर्गगमन वी. सं. 1681 (वि. सं. 1211-ई. स. 1154) में हुआ। वी. सं. 1683 (वि. सं. 1213-ई. स. 1156) में अञ्चल गच्छ की उत्पत्ति होना माना जाता है और इसी वर्ष मंत्री उदयन का पुत्र बाहड मंत्री ने शत्रुंजय तीर्थ का चौदहवां उद्धार कराया था। वी. सं. 1706 (वि. सं. 1236-ई. स. 1179) में सार्ध पूर्णमियक गच्छ की उत्पति हुई जिसके बाद वी. सं. 1755 (वि. सं. 1285-ई. स. 1228) में आ. जगच्चन्द्र सूरि को मेवाड़ के राजा जैत्रसिंह ने उनकी कठिन आयंबिल तपस्या से प्रभावित होकर उन्हें 'तपा' का विरुद प्रदान किया और तब से बड़गच्छ 'तपागच्छ' उपाधि से विख्यात हुआ जो अद्यावधि चला आ रहा है। आ. जगच्चन्द्र सूरि, एक महान क्रियोद्धारक हुए हैं और मंत्री वस्तुपाल तेजपाल ने उनके अनुयायी होकर गुजरात में सुविहित जैन धर्म का प्रसार करने में सहायता दी।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वस्तुपाल तेजपाल गुजरात के राजा वीरधवल के मंत्री थे जिन्होंने जैन धर्मों के आदर्शों को मान कर सम्पूर्ण जनता की समानता-पूर्वक सेवा की। वी. सं. 1758 (वि. सं. 1288-ई. स. 1231) में विश्व-विख्यात लूण वसहि के नाम से विशाल कलामय संगमरमर के मन्दिर का निर्माण कराया। इसके निर्माण में 12 करोड़ 53 लाख का सद्व्यय होने का अनुमान किया जाता है। इस मन्दिर में भगवान् नेमिनाथ की कसौटी की जिन प्रतिमा की प्रतिष्ठा उनके गुरु विजयसेन सूरि और उदयप्रभसूरि द्वारा कराई गई थी। विश्व के इतिहास में जन सेवा के कार्यों में अटूट द्रव्य का व्यय करने वाले महापुरुष विरले ही मिलेंगे। वस्तुपाल, अनुपम दानवीर, अद्वितीय प्रजापालक, और कुशल महा मंत्री था। वह वीर योद्धा नीति-निपुण, कला-प्रेमी और साहित्य-रसिक महाकवि था।[1] आ. उदयप्रभ सूरि ने 'संघपति-चरित्र' और 'सुकृत-कीर्ति-कल्लोलिनी' ग्रंथ लिखे हैं। वे और विजय सेन सूरि प्राचीन अपभ्रंश गुजराती के उत्तम रचनाकार गिने जाते हैं।

वीर संवत् 1783 से 1785 (वि. सं 1313 से 1315-ई. स. 1256 से 1258) में भारत के तीन 'वर्षीय दुष्काल में जैन श्रावक कच्छ देशीय भद्रेश्वर का श्रीमाली सेठ जगडुशाह ने मगध से गुजरात व गुजरात से राजस्थान प्रदेश तक के दुष्काल पीड़ितों के लिए इतना अन्न वितरण किया कि इस महापुरुष का आदर्श अमर हो गया। उन्होंने एतदर्थ 112 दान-शालाएँ और पानी के लिए प्याऊएँ खोलीं व 'जगजीवन हार जगडु' कहलाए।[2]

वी. सं. की 19वीं शताब्दी (वि. सं. की 15वीं शताब्दी) में देवेन्द्र सूरि आचार्य हो चुके हैं। उन्होंने 'कर्म-ग्रन्थ' और 'श्राद्ध दिनवृत्यादि' अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। उनके सदुपदेश से मेवाड़ के वीर केसरी समरसिंह और उनकी माता जयतुल्ल देवी ने चित्तौड़ पर 'श्याम पार्श्वनाथ का मन्दिर' निर्माण

1 'जैन परम्परा नो इतिहास' '(भाग तीजो) लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 305 से 308

'Jainism in Rajasthan' Dr. K. C. Jain. p. 214-218

2 वही पृ. 311,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कराया और सारे राज्य में उनके धर्मोपदेश से अमारि पलाई थी ।[1] उसी समय में आ. जिनप्रभ सूरि हुए थे जिन्होंने मुसलमान सम्राटों को प्रतिबोध करने में पहल की थी । वे विख्यात 'विविध तीर्थ कल्प' के रचयिता भी थे ।

वी. सं. 1802 (वि. सं. 1332-ई. स. 1275) में आ. सोमप्रभु सूरि, समर्थ ग्रन्थकार हुए हैं उनका ग्रन्थ 'सिन्दूर प्रकरण' सूक्त मुक्तावली या सोमशतक) प्रसिद्ध है और उसको जैन समुदाय के सब लोग मानते हैं। उसके बाद वी. सं. 1804 (वि. सं. 1334 ई. स. 1277) में आ. प्रभाचन्द्र सूरि के 'प्रभावक चरित्र' और धर्मकुमार मुनि ने 'शालिभद्र चरित्र' लिखा । वी. सं. 1819 (वि. सं. 1349 ई. स. 1292) में आ. मल्लिषेण सूरि ने स्याद्वाद मंजरी और आ. मेरुतुंग सूरि ने वी. सं. 1832 (वि. सं. 1362-ई.स.1305)में 'प्रबन्ध चितामणि' और वी.सं. 1875 (वि.सं.1405 ई. स. 1348) राजशेखर सूरि हुए जिन्होंने 'प्रबन्ध कोष' और 'स्याद्वाद-कलिका, ग्रन्थों की रचना की ।

वी. सं. 1841 (वि. सं. 1371-ई. स. 1314) में ओसवाल समराशाह ने शत्रुंजय तीर्थ का 15वाँ जीर्णोद्धार कराया । वी. सं. 1846 (वि. सं. 1376-ई.स. 1319) में खरतर गच्छ के कलिकाल केवली जिनचन्द्र सूरि का स्वर्गवास हुआ । आ. जिनचन्द्र सूरि ने प्राकृत भाषा में एक महत्त्वपूर्ण वृहद् ग्रन्थ 'संवेगरंगशाला' बनाया था । वी. सं. 1838 (वि. सं. 1368-ई. स. 1312) में आबू पर पीतल की धातु प्रतिमा विमल वसहि में और कसौटी पाषाण की लूण वसहि में प्रतिमा, यवनों द्वारा संभवतः अलाउद्दीन खिलजी की सेना द्वारा भंग होने पर, 10 वर्ष बाद वी. सं. 1848 (वि. सं. 1378-ई. स. 1321) में विमल वसहि के मूल नायक की वर्तमान पाषाण की भगवान ऋषभदेव की श्वेत मूर्ति को श्रावक लल्ल और बीजड[2] ने और लूण वसहि के मूल नायक नेमिनाथ की श्याम वर्ण की मूर्ति को, श्रावक

1 'Jainism in Rajasthan' Dr. K C. Jain, p. 29-30

2 'जैन परम्परा नो इतिहास, (भाग तीजो) लेखक त्रिपुटी महाराज पृ. 389-390

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पेथड ने प्रतिष्ठित कराई। पेथड मांडवगढ़ के महाराज जयसिंह का मंत्री था। उन्होंने 700 उपाश्रय, 84 जिन मन्दिर जिनमें से मांडवगढ़ में वी. सं. 1800 (वि. सं. 1330-ई. स. 1273) के लगभग 18 लाख रुपये का 72 देवरी वाला विशाल जिन मन्दिर भी था, निर्माण कराये एवं 36 हजार सोना मोहर खर्च करके बड़े ग्रन्थ भंडार स्थापित किये। पेथड कुमार और और उनके पुत्र झाँझड प्रतिबोधक शासन प्रभावक धर्मघोष सूरि थे।[1]

वीर शताब्दी 1900 (विक्रम की 15वीं सदी के पूर्वार्द्ध) में खरतर गच्छ के विख्यात आचार्य जिनकुशल सूरि (दादाजी) हुए जो बड़े विद्वान् माने जाते हैं। उन्होंने सिंध में धर्मोपदेश देकर जैन धर्म का भारी प्रचार किया, संघ यात्रा निकाली और वी. सं. 1822 (वि. सं. 1352 ई. स. 1295) में स्वर्गवासी हुए सो आज भी वे बहुत पूजे जाते हैं।

वीर शताब्दी 1900 (विक्रम की 15 वीं सदी) में दिगम्बर हुबंड ज्ञातीय विक्रम श्रावक ने नेमि चरित्र और अन्य गृहस्थ हस्तिमल्ल जो जाति से ब्राह्मण थे, दिगम्बर रूपक व नाटक लिखे जिनके नाम विक्रान्त कौरव, 'अंजना पवनंजय', 'सुनंदा, 'प्रतिष्ठा तिलक' है। ये संस्कृत और कन्नडी भाषा के ज्ञाता थे। वीर सदी 1900 (विक्रम की 15वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध) में जिनप्रभ सूरि ने दिल्लीपति महमूद तुगलक को प्रभावित किया एवं 'श्रेणिक-चरित्र-द्वाश्रय' ग्रन्थ लिखा।

वीर संवत् की 20वीं शताब्दी (विक्रम की 15वीं सदी) में विख्यात आचार्य सोमसुन्दर सूरि और मुनिसुन्दर सूरि हुए हैं। पूर्वाचार्य श्री सोम-सुन्दर सूरि महान् प्रभावक आचार्य हुए हैं। उनकी आम्नाय में 1800 श्रमण थे। मेवाड़ के महाराणा मोकल और कुम्भा उनके भक्त थे। सबसे महानतम कार्य जो इनके समय में हुआ वह था प्रख्यात राणकपुर जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा जो वी सं. 1966 (वि सं. 1496-ई सं 1439) में उनके द्वारा हुई।[2] अप्रतिम कला-युक्त राणकपुर का जैन मन्दिर जिसको 'त्रैलोक्य

1 वही. पृ. 3:4-318

2 'जैन परम्परा नो इतिहास' (भाग तीजो) : लेखक त्रिपुटी महाराज, पृ. 372

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दीपक' भी कहते हैं, सेठ धरणशाह पोरवाल ने निर्माण कराया था और भी आचार्य श्री सोमसुन्दर सूरि के समय में पोसीना तीर्थ वी. सं 1947 (वि. सं. 1477 ई. स. 1420) और मगसी तीर्थ वी सं. 1967 (वि. सं. 1497-ई स. 1440) में स्थापित हुए। वी. सं 1948 (वि. सं. 1478-ई. स. 1421) में राणा मोकल के राज्य में प्रसिद्ध जावर नगरी (उदयपुर-मेवाड़) में संघ-पति धनपाल पोरवाल द्वारा निर्मित भगवान् शान्ति-नाथ के जिन-प्रासाद की प्रतिष्ठा भी आचार्य सोम सुन्दर ने की थी। उनके उपदेश से वी. सं. 1972 (वि. सं. 1502-ई. सं. 1445) में पर्वत श्रीमाली ने बड़ा ग्रन्थ भण्डार स्थापित किया था।

आ. सोमसुन्दर सूरि के पट्टधर शिष्य आ. मुनिसुन्दर सूरि महान विद्वान् आचार्य हुए हैं। उनको 'वादि-गोकुल-सांड', 'काली-सरस्वती' कहते थे। उनके उपदेश से सिरोही के राव सहस्रमल ने अमारि पलाई थी और मेवाड़ के देलवाड़ा में विघ्नों के निवारणार्थ 'सन्तिकरं स्तोत्र' की रचना की। श्वेताम्बर जैन आज भी उसका पठन करते हैं। उनके गुरु आ. सोमसुन्दर सूरि तीन बार देलवाड़ा पधारे और वहां के विशाल कलात्मक कई जैन मन्दिरों की मूर्त्तियों की प्रतिष्ठा उन्होंने और उनके शिष्यों एवं खरतर गच्छ के आ. श्री जिन वर्धन सूरि, श्री जिन सागर सूरि, श्री जिन चन्द्र सूरि तथा श्री सर्वाणंद सूरि ने अनेक बार की।[1] वी. सं 1967 (वि. सं 1497-ई, सं 1440) में पं जिन हर्षगणि ने 'वस्तुपाल चरित्र' नामक ऐतिहासिक महाकाव्य चित्तौड़ में सम्पूर्ण किया।[2] वीर सं. 1966 (वि. सं. 1496—ई. सं. 1439) में आ. जय शेखर सूरि ने 'न्याय-मंजरी' 'जैन कुमार सम्भव', 'उपदेश माला' आदि ग्रन्थ लिखे हैं और वृहद्गच्छ के आचार्य रत्न शेखर सूरि ने 'सम्बोध सत्तरी', 'श्राद्धविवाधि' 'गुण स्थानक कमारोल' आदि ग्रन्थ लिखे हैं। उनका स्वर्ग गमन वी. सं. 1987 (वि. सं. 1517—ई. सं. 1460) में हुआ।

---

1 वही पृ. 444-522

2 वही पृ. 455

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वी. सं. 1978 (वि. सं. 1508—ई सं. 1451) में लुंकामत (जो बाद में ढूढक (खीज) वृत्ति के कारण ढूढियाँ पन्थ कहलाया) लोंकाशाह ने प्रवृत किया। लोंकाशाह, यति ज्ञानसुन्दरजी के पास लहिया शास्त्रों की हस्तलिखित प्रतियाँ बनाने वाले थे। उन्होंने अकाल पीड़ितों की तन, मन, धन से सेवा की और एक आदर्श गृहस्थ माने जाते थे। जैन धर्म के मूल तथ्य की खोज करके जिन प्रतिमोत्थापन में विश्वास रखते हुए दया धर्म का प्रचार श्रावक लखमशी और भाणजी की सहायता से किया। वी सं. 2001 (वि. सं. 1531—ई. सं. 1474) से गुण पूजक धर्म विस्तार प्राप्त करने लगा। लोंकागच्छ (लोंकामत) के प्रथम वेशधारी साधु भाणजी हुए और उनसे वी. सं. 2003 (वि. सं 1533—ई. सं 147०) में वेशधरों की उत्पत्ति हुई। लोंकाशाह के 400 शिष्य थे। वी सं. 2038 (वि. सं. 1568—ई. सं 1511) में लोंकागच्छीय वेषधारी रूपजी, वी. सं 2048 (वि. सं. 1578—ई. सं. 1521) में लुंपक वेशधारी जीवाजी ऋषि, वी. सं. 2057 (वि. सं 1587—ई. सं. 1530) में लुंपक मती वृद्ध वर सिंहजी, वी सं. 2076 (वि सं 1606—ई सं 1549) में लुंकामत के वृद्ध वर सिंहजी प्रसिद्ध हुए हैं। लोंकागच्छ का शनैः शनैः देश में प्रचार हुआ। गुजराती लोंकागच्छ, बड़ौदा, सौराष्ट्र, गुजरात तथा कच्छ में विस्तृत हुआ, नागौरी लोंकागच्छ, राजस्थान, देहली प्रदेश में फैला और उत्तरार्द्ध, पंजाब, पेप्सु, पश्चिमी पंजाब (पाकिस्तान), उत्तर प्रदेश में प्रसारित हुआ। इस मत के पूज्य पाँच 1 पू० जीवराजजी, 2 पू० श्री लवजी ऋषि, 3. पू० श्री धर्मसिंहजी, 4. पू० श्री धर्मदासजी और 5 पू० श्री हरजी ऋषि हुए हैं जिनका और उनके मुख्य शिष्यों का वर्णन आगे किया जावेगा। वी सं. 2040 (वि. सं 1570—ई सं. 1513) में लोंकागच्छ से बीजा नाम के वेष धर से, बीजा-मत की उत्पत्ति हुई जिसको 'विजय-गच्छ' कहने लगे।

आधुनिक काल (वीर सं. 2001 से वीर सं. 2500 तक)

वी. सं. 1001 से वी. सं. 2000 (वि सं. 531 से वि. सं. 1530—ई. सं. 474 से ई. स. 1473) तक के लम्बे समय में जैन धर्म के इतिहास में, कई जैन तीर्थों की स्थापना हुई और प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रंश

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

भाषाओं में प्रचुर मात्रा में जैन साहित्य लाखों श्लोक प्रमाण में लिखा गया जो कि एक महान् कीर्त्तिमान है। भारतीय वाङ्मय को जैन साहित्य ने जो योगदान दिया है वह अतुलनीय और अपूर्व है। सहस्रों और लाखों हस्त-लिखित शास्त्र, जो विविध विषयों पर जैन श्रमणों और कुछ जैन श्रावकों ने लिखे हैं, इस देश की अमूल्य निधि है और उनका विदेशी विद्वानों ने अपनी अपनी भाषा में अनुदित कर विश्व में जैन धर्म के मूल सिद्धान्तों का, आध्यात्मिक और वैज्ञानिक ढंग से प्रचार और प्रसार किया है। श्रमण संघ में, चैत्यवासियों की शिथिलता के कारण, विधि मार्ग और सुविहित मार्ग का आश्रय लेकर क्रियोद्धार हुआ है और क्रियोद्धार के साथ-साथ गुण पूजक लोंकामत (जो आगे चलकर स्थानकवासी सम्प्रदाय के नाम से विख्यात हुआ) का प्रादुर्भाव हुआ।

तत्पश्चात् वी सं 2001 (वि. सं. 1531—ई स 1473) से वी. सं. 2500 (वि. सं. 2030—ई. स. 1973) तक 500 वर्ष की अवधि में जैन धर्म के स्वरूप का दिग्दर्शन मात्र कराना शेष रह जाता है। वी सं. 2042 (वि. सं. 1572–ई. स. 1515) में तपागच्छ नागपुरीय शाखा में पार्श्वचन्द्र उपाध्याय से पार्श्वचन्द्र गच्छ की उत्पत्ति हुई और वी. सं 2052 (वि सं. 1572–ई. स. 1525) में आ. आनन्द विमल सूरि हुए जिन्होंने कितनेक साधुओं का गुरु आज्ञा ने क्रियोद्धार किया। वी. सं. 2057 (वि सं. 1587 ई स 1530) में आ. विजयदान सूरि को आचार्य पद मिला और कर्माशाह चित्तौड़ के विख्यात जैन व्यापारी ने शत्रुञ्जय का सोलहवाँ उद्धार कराया। कर्माशाह का पिता तोलाशाह के धर्म गुरु आ धर्मरत्न सूरि थे जो एक बार सङ्घ सहित चित्तौड़गढ़ तीर्थ पर पधारे तो राणा सांगा ने हाथी, घोड़ा आदि सैन्य सहित उनका स्वागत किया तथा उनके उपदेश से शिकार और दुर्व्यसनों का त्याग भी किया था।[1]

जगत्गुरु आचार्य श्री हीर विजय सूरि— वीर संवत् की 21 वीं शताब्दी (विक्रम की 16 वीं सदी) में मुगल सम्राट् अकबर के समय में, आचार्य

1. जैन परम्परा नो इतिहास भाग तीजो। लेखक—त्रिपुटी महाराज पृ. 34

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

श्री हीर विजय सूरि प्रकाण्ड और प्रख्यात जैन श्रमण हुए जिनको बादशाह अकबर ने 'जगतगुरु' के विरुद से अलंकृत किया। आ. श्री हीर विजय सूरि का जन्म वी.सं 2053 वि.सं. 1583 ई.स. 1526 और दीक्षा वी. सं. 2066 वि. सं. 1596 ई स. 1539 में हुई। अकबर बादशाह ने आगरा में जब चंपा श्राविका के छह महीने की तपस्या करने पर बहुमान करने के लिये वरघोड़ा (धार्मिक जैन जुलूस) देखा तो उनकी श्राविका चंपा के गुरु आ. हीर विजय सूरि के दर्शन करने की जिज्ञासा जागृत हुई। उन्होंने आचार्य श्री को गुजरात से फतहपुर सीकरी बुलाया। जहाँ पर प्रथम दर्शन होने पर बादशाह बहुत प्रभावित हुआ। उस समय आचार्य श्री के साथ 67 मुनि थे और उनमें प्रमुख महोपाध्याय शान्तिचन्द्र गणि और महो. भानुचन्द्र गणि थे। 4 वर्ष तक अकबर को आचार्य श्री ने फतहपुर विराज कर धर्मोपदेश सुनाया और जैन शासन के लिये पशु पक्षियों का शिकार, मांसाहार आदि बन्द कराया यहाँ तक कि स्वयं सम्राट अकबर ने जो प्रातः 500 चिड़ियों की जिह्वाओं का कलेवा करता था वह बन्द कर दिया। छः महीने तक के लिए अमारि (अहिंसा) का फरमान आचार्य श्री ने निकलवाया तथा अन्य भी जैन तीर्थ सम्बन्धी अनुज्ञा-पत्र जारी कराये और जजिया कर माफ कराया। वी. सं. 2110 (वि सं. 1640-ई स. 1583) ने फतहपुर सीकरी में आ हीर विजय सूरि के शिष्य पं. भानुचन्द्र गणि को 'महोपाध्याय' का विरुद दिया। कहा जाता है कि अन्त में अकबर ने आचार्य श्री के उपदेश से माँसाहार भी बन्द कर दिया। इस विषय में प्रसिद्ध इतिहासकार विसेन्ट ए. स्मिथ के शब्द उद्धृत करना उपयुक्त होगा।

"उसने मांसाहार बहुत कम कर दिया और करीब करीब उसका उपभोग बिल्कुल छोड़ दिया। अपने जीवन के पिछले वर्षों में जब वह जैन प्रभाव में आया।"

"किन्तु जैन साधु ने निःसन्देह, वर्षों तक लगातार अकबर को उपदेश सुनाये जिससे उसके चरित्र पर भारी प्रभाव पड़ा और उन्होंने उनके

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सिद्धान्तों की स्वीकृति उससे उतनी प्राप्त कर ली कि वह जैन धर्म का अनुयायी माना जाने लगा।"[1]

मध्य युग के जैनाचार्यों में आचार्य हीर विजय सूरि, एक चमकते सितारे थे। उनकी असाधारण प्रतिभा, प्रताप, अपूर्व विद्वत्ता की यशः पताका जैन धर्म के उपासकों में ही नहीं किन्तु समस्त भारत में फहराती थी। भगवान् महावीर के अहिंसा का डिडिमनाद सारे भारतवर्ष में सूरिजी ने सुनाया था। ये सूरिजी अलौकिक विभूति थे। उनके तेज पुण्य और प्रभाव के सामने बड़े-बड़े सम्राट, सुल्तान, राजा, महाराजा, धनाढच और दिग्गज पंडित सिर झुकाते थे। जैन श्रमणों के त्यागमय जीवन का खरा (वास्तविक) परिचय सूरिजी ने कराया था। वे केवल गुजरात के ही सपूत नहीं थे किन्तु भारत की महान् विभूति और जैन श्रमण संस्कृति के आदर्श प्रतिमा समान थे। उनके 2000 शिष्य थे जिन्होंने राज अनुकूलता का लाभ लेकर मालवा, मेवाड़, राजस्थान, दक्षिण पूर्व पंजाब, लाहौर, काश्मीर आदि स्थानों में विचरण कर जैन धर्म का खूब प्रभाव जमाया और जहाँगीर, शाहजहां सम्राटों एवं उनके राज परिवार को भी उपदेश दिया। आचार्य श्री के अन्य विद्वान् शिष्य श्री सिद्धिचन्द्रजी को खुश फहम का माना हुआ विरुद बादशाह अकबर ने प्रदान किया था। इस प्रकार मध्य युग में, जैन धर्म का प्रचार और प्रसार भारत में चरम सीमा तक पहुँच चुका था।

---

1. "He used little for flesh food and gave up the use of it almost entirely in the later years of his life when he came under Jain influence.

...........'But the Jain Holy man, un-doubtedly. gave, Akbar pralouged instruction for years, which largely influenced his actions and they secured his assent to their doctrines so far that he was reputed to have been convert to Jainism.'

—Vincent A. Smith's Jain Teachers of Akbar p. 17.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आ. हीर विजय सूरि की तरह आ. जिनचन्द्र सूरि (खरतरगच्छ) ने भी फरमान जारी कराये सम्राट् अकबर से, जिसने उनका उपदेश लाहोर में सुना था। उसी प्रकार बादशाह अकबर ने आ. विजयसेन सूरि को लाहोर में बुलवाकर धर्मोपदेश सुने और काली-सरस्वती का उनको विरुद भी दिया। उनका स्वर्गवास वी. सं 2141 (वि. सं. 1671 - ई. स 1614) में हुआ था। उन्होंने 4 लाख जिन बिंबों की प्रतिष्ठा की और प्रसिद्ध जैन तीर्थ तारंगा शंखेश्वर, सिद्धाचल, पंचासर, राणकपुर, कुंभारियाजी, बीजापुर आदि तीर्थों का जीर्णोद्धार अपने समय में करवाया था।

सम्राट् जहांगीर ने मांडवाढ में आ. विजयदेव सूरि को बुलवा कर उनके उपदेश से प्रसन्न होकर, "जहाँगिरि महा तपा" के विरुद से उन्हें अलंकृत किया। उसी प्रकार मेवाड़ के राणा जगतसिंह प्रथम वी.सं. 2098—(वि सं 1628-ई स. 1571 से वी. सं. 2122-वि. सं. 1652-ई. स. 1595) ने उदयपुर में धर्मोपदेश उनसे सुनकर वरकरणा पार्श्वनाथ के मेले के दिन पौष विद 0 के अवसर पर यात्री-कर माफ किया, राज्याभिषेक दिवस, जन्म म.स और भाद्रपद में जीव हिंसा बन्द की, प्रसिद्ध पीछोला और उदयसागर झीलों में मछलियों का पकड़ना रोका और मचिंद दुर्ग पर राणा कुंभा द्वारा निर्माण कराये हुए चैत्यालय का पुनरुद्धार किया।[1]

वी सं. 2202 (वि. सं. 1732-ई. स. 1675) में मेवाड़ के राणा राजसिंह के मन्त्री दयाल शाह ने राज नगर में दयाल शाह का किला तीर्थ का निर्माण कराया और उसमें चतुर्मुख भगवान् आदीश्वरजी की मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराई।

आचार्य विजयसेन सूरि के प्रशिष्य श्री केसर कुशल ने औरंगजेब बादशाह के पुत्र बहादुरशाह और दक्षिण के सूबा नवाब महम्मद युसुफखान को प्रतिबोध कर, दक्षिण में प्रसिद्ध कुल्पाक तीर्थ का जीर्णोद्धार करवाया। विजयदेव सूरि आचार्य के प्रशिष्य आ. विजयरत्न सूरि ने वी. सं. 2234 (वि सं. 1764-ई. स. 1707) में नागौर के राणा अमरसिंह को और

---

1 'श्री तपागच्छ श्रमण वेश वृक्ष' (पुस्तकाकार बीजी आवृत्ति गुजराती) जयन्तीलाल छोटालाल अहमदाबाद पृ. 60 से 62।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वी. सं. 2241 (वि. सं. 1771-ई. स. 1714) में जोधपुर नरेश श्री अजितसिंह को प्रतिबोधित किया था। वी. सं. 2192 (वि. सं. 1722 ई. स. 1665) के आसपास उपाध्याय यशोविजयजी और अध्यात्म-ज्ञानी आनन्द घनजी हुए, जिनके पद, अध्यात्म-ज्ञान और चिन्तन के लिये प्रसिद्ध हैं। योगीराज आनन्द घनजी अनेक शास्त्रों के पण्डित तो थे ही, साथ साथ वे गायक और वादक भी थे। उनकी कृति 'आनन्द-घन-चौबीसी' प्रख्यात है। उपा. यशोविजयजी भी सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हुए हैं जिनके ग्रंथ 'स्याद्वाद-रहस्य' अध्यात्मसार अध्यात्म-निषद विख्यात हैं। उपा. यशोविजयजी सूक्ष्म दृष्टि विचारक, प्रतिभाशाली, दर्शन शास्त्री और महान् साहित्यकार थे। वे बनारस में विश्व विदग्धा और 'न्याय-विशारद' की पदवियों से विभूषित किये गये थे। हेमचन्द्राचार्य के बाद जैन न्याय के उत्तम विद्वान् हुए हैं उनका स्वर्गवास वी. सं. 2213 (वि. सं. 1743-ई. स. 1686) में हुआ। दोनों विभूतियों का मिलन कहीं आबू प्रदेश में हुआ था। इनके अतिरिक्त श्रमण विनयविजयजी, मेघविजयजी, भावविजयजी आदि ने साहित्य की अच्छी सेवा की है।

वीर संवत् की 24 वीं और 25 वीं **शताब्दी (विक्रम की** 20 वीं और 21 वीं सदी) युगवंदनीय शास्त्र विशारद विजयधर्म सूरिजी हुए जिन्होंने उपाश्रय से बाहर वाराणसी की गलियों में धर्मोपदेश दिया और कई ग्रन्थ मालाएँ एवं विद्या-शालाएँ स्थापित की। वे न केवल भारतीय राजाओं के उपदेशक थे किन्तु विदेशी विद्वानों को भी जैन धर्म का प्रतिबोध करने वाले थे। पाश्चात्य देशों में जैन धर्म साहित्य का प्रबल प्रचार किया। कई एक का मांसाहार भी छुड़ाया। उन्होंने जैन धर्म में प्रचलित कुरीतियों को भी अपने उपदेश से मिटाया। दूसरे विख्यात आचार्य श्री विजयनेमि सूरिजी हुए जिन्होंने लींवडी गोंडल, जुनागढ़ आदि नरेशों को प्रतिबोधित कर उनके राज्य में अहिंसा पलाई थी। आगमोद्धारक श्री सागरानन्द सूरिजी सेलाना (मध्य प्रदेश) के नरेश के प्रतिबोधक थे। आधुनिक युग में जैनागमों को शुद्ध स्वरूप में प्रकाशित करने वाले प्रथम आचार्य थे। उनके उपदेश से पालीताणा में आगम मन्दिर स्थापित हुआ। आ. श्री विजय कमल सूरिजी, श्री वल्लभ-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

विजय सूरिजी, श्री विजयदान सूरिजी आदि ने अनेक राजपूतों, जाटों को उपदेश देकर अहिंसा धर्म का प्रचार किया और बड़ौदा नरेश को भी प्रतिबोध किया। इसी प्रकार आ. बुद्धिसागरजी, आ. विजय केशर सूरिजी आदि ने छोटे-छोटे राजाओं और राजपूतों को उपदेश देकर अहिंसा का पालन कराया। आ. विजय शान्ति सूरिजी ने बीकानेर, लींबड़ी और जोधपुर आदि के राजा महाराजाओं को अपने धर्मोपदेश से मांसाहार और शिकार छुड़ाया। आ. चरित्र विजय जी ने पालीताणा के तत्कालीन एडमिनिस्ट्रेटर (प्रशासक) मेजर स्ट्रोंग तथा पालिया, लाकड़िया आदि राजाओं को प्रतिबोध देकर सुकृत कार्य किया और कितनेक राजपूतों और अधिकारियों का माँसाहार त्याग करवाया। आबू के योगीराज श्री विजय शांति सूरिजी ने बीकानेर, लींबड़ी, जोधपुर आदि राजा-महाराजा, राजपूतों और अंग्रेज अधिकारियों को प्रतिबोध कर माँसाहार छुड़ाया और शिकार तथा व्यसनों को बन्द कराया।

25 वीं वीर शताब्दी में कई महान् आचार्य हुए हैं जिन्होंने इस युग में धर्म प्रचार और प्रसार में महान् योगदान दिया है। सबसे प्रथम श्री मोहनलालजी महाराज (श्री मुक्ति विजयजी) आते हैं जिन्होंने वी. सं. 2401 (वि. सं. 1931-ई. सं. 1874) संवेगी दीक्षा ग्रहण की। भारत की अलबेली नगरी बम्बई में धर्म का अंकुर बोने में पहल करने वाले और विशाल धर्म वृक्ष की वृद्धि करने वाले श्रमण हुए हैं। उनका स्वर्गवास वी. सं. 2433 (वि. सं. 1963-ई. स. 1906) में हुआ था। योगनिष्ठ श्री बुद्धिसागरजी महाराज की दीक्षा वी सं. 2427 (वि.सं. 1957-ई.स.1900) और स्वर्गगमन वी. सं. 2451 (वि.सं. 1981-ई. स. 1924) में हुआ ये एक उत्तम योगी,साहित्य के विशिष्ट विलासी,आध्यात्मिक ज्ञान के अपूर्व निधि और जैन समाज के अद्वितीय प्रतिनिधि थे जिन्होंने 125 अपूर्व ग्रन्थों की रचना की। उनके शिष्य प्रख्यात आत्मारामजी महाराज थे जिन्होंने वी. सं. 2402 (वि. सं. 1932-ई. स. 1875) में श्री बूटेराजजी महाराज से दीक्षा ली और विजयानन्द-सूरिजी तरीके विख्यात हुए। जन्म संस्कार से सिक्ख धर्म पालने वाले थे। उन्होंने जैन धर्म की जितनी रक्षा की उतनी किसी अन्य ने नहीं की। शिकागो (अमेरिका) में 'विश्व धर्म परिषद्' में वीरचन्द राघवजी

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

एक जैन स्नातक-को भेज कर विश्व में जैन धर्म की प्रसिद्धि की। वे विचक्षण बुद्धि के धनी और अपूर्व अभ्यास शक्तिधारी थे। संप्रदाय, मत-मतांतर से जुदा पड़ कर पंजाब में सद् धर्म की प्ररूपणा की। 'जैन तत्त्वादर्श,' 'अज्ञान-तिमिर-भास्कर' 'चिकागो प्रश्नोत्तर' आदि सुन्दर ग्रन्थों की रचना की। पाश्चात्य विद्वानों पर इनकी प्रतिभा की अजीब छाप पड़ी थी। वी. सं. 2423 (वि. सं. 1953-ई. स. 1893) में उनका स्वर्गवास हुआ। पंजाब केशरी श्री विजय वल्लभ सूरिजी को वी. सं. 2414 (वि. सं. 1944-ई. स. 1887) में 22 साधुओं सहित दीक्षा दी थी।

श्री विजयदान सूरिजी (दीक्षा वी. सं. 2416-वि. सं. 1946-ई. स. 1889. और स्वर्गवास वी. सं. 2462-बि. सं. 1992-ई. स. 1935) आधुनिक श्रमण इतिहास में अग्रगण्य माने जाते हैं। व्याकरण, काव्य, ज्योतिष, न्याय के निपुण विद्वान् थे और श्री वल्लभसूरिजी शिक्षा और कला के प्रेमी तथा समाज-सुधारक आचार्य हुए जिन्होंने बम्बई में महावीर जैन विद्यालय स्थापित किया। उनका स्वप्न जैन-विश्वविद्यालय स्थापित करने का था, जो साकार नहीं हो सका। फिर भी उन्होंने पंजाब में विस्तृत धर्म प्रचार किया और कई शिक्षण संस्थाएँ उनके उपदेश से स्थापित हुईं।

आचार्य विजय नीति सूरिजी एक संगठन प्रेमी आचार्य हो गये हैं। उन्होंने चित्तौड़गढ़ के तीर्थ 'सतवीस देवरा' का उद्धार कराया। इसके अतिरिक्त श्री विजय लब्धि सूरिजी, श्री विजय यतीन सूरिजी, श्री लक्ष्मण सूरिजी, श्री विजयप्रेम सूरिजी, श्री विजय लावण्य सूरिजी, त्रिपुटी महाराज—जी दर्शन ज्ञान न्याय—विजयजी—आदि विशिष्ट श्रमण हो चुके हैं जिन्होंने जैन साहित्य क्षेत्र में अनेक आवश्यक सेवाएँ प्रदान कर जैन शासन की प्रभावना की है। शास्त्र विशारद आ. विजयधर्म सूरिजी के विद्वान् शिष्य रत्न-मुनि न्याय विजयजी, मुनि विद्या विजयजी, मुनि जयन्त-विजयजी ने भी कई पुस्तकें लिख कर जैन साहित्य की सेवा की है। पुरातत्त्व-विद् श्री पुण्यविजयजी, मुनि श्री जिनविजयजी, श्री कल्याणविजयजी को भी भूला नहीं जा सकता जिन्होंने प्राचीन जैन शास्त्रों का गहन अध्ययन कर अपनी टीकाएँ लिखी हैं। भारत प्रसिद्ध जैसलमेर जैन ज्ञान भण्डार के ताड-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

पत्रीय और हस्त लिखित शास्त्रों को विधिवत् सूची तैयार करने का श्रेय स्व. श्रमण पुण्यविजयजी को है।

जैन श्रमणों के अतिरिक्त पं. सुखलालजी, पं. लाभचन्दजी, पं हरगोविन्दजी, पं बेचरदासजी, डॉ. ए. एन. उपाध्याय, डॉ. हीरालाल जैन, डॉ नेमिचन्द शास्त्री, पं. चैनसुखदास आदि की साहित्य सेवा प्रशंसनीय है। ये प्रसिद्ध जैन विद्वान् माने जाते हैं। पं. सुखलालजी की 'तत्त्वार्थ सूत्र की टीका' श्रेष्ठ कृति है। उन्होंने जैन दर्शन के बारे में नई दृष्टि अपनाई है।

गत पाँच सौ वर्षों (वी सं. 2001 से 2500) में, दिगम्बर जैन श्रमणों और श्रावकों ने, जैन साहित्य, अधिकतर अपभ्रंश और हिन्दी भाषा में लिखा है। वी. सं. की 21 वीं सदी (वि. सं. की लगभग 16 वीं सदी) में दिगम्बर श्री जिन चन्द ने 'सिद्धान्त सार' श्री ज्ञानभूषण ने 'सिद्धान्त सार भाष्य' और 'आदीश्वर फागु' तथा भट्टारक श्री शुभचन्द्र ने 'प्रमाण परीक्षा', 'वनस्पति कौमुदी' आदि ग्रन्थ लिखे। आ. शुभचन्द, व्याकरण, छन्दोलंकार के पारगामी थे। उन्होंने विहार, गोड, कलिंग, कर्णाटक, तौलव, पूर्व गुर्जर में जैन धर्म का प्रचार किया। श्री वादिचन्द्र ने 'पार्श्व पुराण' (वि. सं. 1640) पवन दूत और ज्ञान सूर्योदय (वि. सं. 1648 की रचना की। 22 वीं वीर शताब्दी (वि. सं. 17 वीं शताब्दी) में काष्ठ संघ के प्रधानाचार्य षट्-भाषा-चक्रवर्ती, श्री भूषण ने, 'शान्ति पुराण', 'पाण्डव पुराण', 'हरिवंश पुराण' की रचना की। वीर सदी 23 वीं (वि. सं. 18 वीं) में श्री वादिराज ने वि. सं. 1729 में 'ज्ञान-लोचन-स्तोत्र' लिखा था।

दिगम्बर सम्प्रदाय में आचार सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना की कमी रही है। इस विषय पर 'मूलाधार' ग्रन्थ प्रसिद्ध है जिस पर वीर नन्दि ने 'आचार सार', आशाधर ने 'धर्मामृत' और सकल कीर्त्ति ने 'मूलाचार प्रदीप' बनाया। श्रावकाचार के लिए सामन्त भद्र का 'रत्न करण्ड' प्रख्यात ग्रन्थ है जिस पर प्रभाचन्द ने टीका लिखी है।

दिगम्बर कवियों ने अपभ्रंश, हिन्दी, ढूंढाडी राजस्थानी में ग्रन्थ साहित्य लाखों श्लोक प्रमाण लिखा है। जयपुर स्थित दिगम्बर भट्टारकों की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

वि. सं 1500 से पूर्व की रचनाएँ मिलती है। दिगम्बर साहित्य सब भाषाओं में मिलता है परन्तु हिन्दी में विशेष है। हिन्दी में दीपचन्द कासलीवाल ने वि. सं. 18 वीं सदी में, 'चिदविलास' और 'आत्मावलोकन', 19वीं सदी विक्रम में पं. दौलतराम ने पद्मपुराण, आदि पुराण और श्रीपाल चरित, पं. टोडरमल ने गोमटसार, लब्धिसार, क्षमण-सार की भाषा टीका 46000 श्लोक परिमाण में लिखी थी। पं. सदासुख ने 'रत्न-करण्ड' (श्रावकाचार) 'तत्वार्थ सूत्र भाष्य' और 'भगवती आराधना' लिखी।

दिगम्बर आम्नाय में भी वनवासी मूल-संघ और चैत्यवासी द्राविड़ संघ, मुख्य माने जाते हैं। वी. सं. 2042 (वि. सं. 1572—ई. सं. 1515) के पूर्व, तारण स्वामी ने तीसरा 'तारण संघ' सेमर खेड़ी गाँव (भूत पूर्व टोंक राज्य के अन्तर्गत) में स्थापित किया और 14 शास्त्रों का निर्माण किया। जिन पूजा के विरोध में शास्त्र पूजा शुरू की। श्वेताम्बरों के यतियों की तरह दिगम्बर में भी भट्टारक प्रथा का प्रादुर्भाव हुआ वी. सं. 1689 (वि. सं. 1219—ई. सं. 1162) में। आ. हेम कीर्त्ति के शिष्य चारुनन्दि ने, दिल्ली के बादशाह के कहने से वस्त्र-धारण किया तब से इस संस्था का प्रादुर्भाव हुआ। उनके अनुयायी शिष्य 'बीस पंथी' कहलाए। भ. हेम कीर्त्ति और चारु कीर्त्ति इत्यादि परम्परा वाली ईडर के भट्टारकों वाली पट्टावली मिलती है। भट्टारकों की गादी राजस्थान में चित्तौड़, नागौर आदि स्थानों पर प्रसिद्ध गिनी जाती थी। भट्टारक श्रमण धन का उपयोग भी करने लग गये थे।

भट्टारकों के शैथिल्य की प्रतिक्रिया हुई कर्म ग्रन्थों और कुन्द-कुन्दाचार्य, आ. अमृतचन्द्र, सोमदेव आदि के अध्यात्म ग्रन्थों के अभ्यासी विद्वान् व्यक्ति, उन लोगों को अनादर की दृष्टि से देखने लगे और स्वयं अध्यात्मी कहे जाने लगे। अध्यात्म विद्वानों की परम्परा में, आगरा के दशा श्रीमाली पं. बनारसीदास, चतुर्भुज, भगवतीलाल, कुमारपाल और धर्मदासजी, वी. सं. 2150 (वि. सं. 1680—ई. सं. 1623) में 'तेरह पंथ' चलाया जिसका अपर नाम 'बनारसी मत' है क्योंकि इस परम्परा को पं. बनारसीदास से विशेष बल मिला। इस मत के स्थापित होने पर, भट्टारक अपने आप को

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

'बीस पंथी' कहलाने लगे। पं. टोडरमल के पुत्र गुमानीरामजी ने वी. सं. 2288 (वि. सं. 1818—ई. सं. 1761) या वी. सं. 2307 (वि. सं 1837—ई. सं. 1780) में जयपुर में नया पंथ 'गुमान पंथ' चलाया। इन्होंने मन्दिर में जाकर तीर्थङ्करों का कटोरी में आह्वान कर पूजा करना शुरू किया था। वी. सं. 2331 से 2340 (वि. सं. 1861 से 1870—ई. सं. 1804 से 1813) के बीच में छाबड़ा गोत्रीय जयपुर निवासी खंडेलवाल गोत्रीय पं. जयचन्द ने 60,000 परिमित भाषा टीकाएँ बनाई थी। 'सर्वार्द्ध सिद्धि', 'परीक्षा-मुख', 'द्रव्य-संग्रह', 'ज्ञानार्णव', 'समय-सार' आदि प्राकृत संस्कृत के दार्शनिक और गम्भीर ग्रन्थों की सरल भाषा में टीका लिखी।[1]

स्थानकवासी श्रमण :

पूर्व में लोंकाशाह के लिये यह कहा गया था कि वे एक गृहस्थ थे। दूसरा मत यह भी है उन्होंने वी. सं. 2006 (वि. सं. 1536--ई. सं. 1479) मार्ग शीर्ष शुक्ला 5 को ज्ञानजी मुनि के शिष्य सोहनजी के पास दीक्षा ली थी। लोंकागच्छ ढूंढियामत जो बाद में स्थानकवासी सम्प्रदाय के नाम से प्रख्यात हुआ, पाँच मुख्य सन्तों के परिवारों में विभाजित होना पाया जाता है।

सबसे प्रथम श्रमण श्री जीवराज जी महाराज हुए जिन्होंने वी. सं. 2045 (वि. सं. 1575—ई. सं. 1518) में दीक्षा ली थी। उनके समय में स्थानक वासी वेष वस्त्र, पात्र, मुखपति, रजोहरण और रजस्त्राण प्रमाण रूप से प्रभावित हुआ। स्थानक वासी समाज में (1) 32 आगम (2) मुख-पति और (3) चैत्य पूजा से विमुखता पर सुधार किया गया। मालवा देश में धर्म जागरण करने का श्रेय उनको दिया जाता है। ये 10-12 संप्रदायों के मूल पुरुष कहे जाते हैं। काठियावाड़ के सिवा सर्वत्र श्री जीवराज जी की परम्परा के साधु साध्वियों की मान्यता है। उनका स्वर्गवास वी. सं. 2068 (वि. सं. 1598 - ई. सं. 1541) के करीब हुआ।

1. 'राजस्थान साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा' : अगरचन्द नाहटा : प्रकाशक ओमप्रकाश, राधाकृष्ण प्रकाशन, अन्तरी रोड़, दरियागंज, दिल्ली, पृ. 113-114

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

2. दूसरे महान् सुधारक श्री लवजी ऋषि हुए जिनकी स्थानक वासी दीक्षा वी. सं. 2164 (वि. सं. 1694—ई. सं. 1637) में हुई। उनसे अनुप्राणित सम्प्रदाय सबसे बड़ी संख्या में है' उनकी परम्परा में वी. सं. 2189 (वि. सं. 1719—ई. सं. 1662) में श्री अमरसिंहजी आचार्य समर्थ विद्वान्,उदार, प्रवचनकार हुए। हिन्दु मुसलमान प्रेम के साथ उनका व्याख्यान सुनते थे। औरंगजेब बादशाह के पुत्र बहादुरशाह व जोधपुर के राज्य के तत्कालीन दीवान श्री खींचचन्दजी भण्डारी अनन्य भक्त थे। श्री लवजी ऋषि की परम्परा पूज्य श्री कान्हजी ऋषि के सम्प्रदाय से प्रसिद्ध हुई। वी. सं. 2414 (वि. सं. 1944—ई. स. 1887) में दीक्षित शास्त्रोद्धारक अमोलक ऋषि जी ने कर्नाटक बंगलौर तक विहार किया। स्थानकवासी समाज के आगमों के साहित्य को सरल सुबोध हिन्दी भाषा में अनुवाद करने वाले आप प्रथम मुनिराज हुए हैं। इस सम्प्रदाय के श्रमण अधिकतर दक्षिण, वरार, खानदेश कर्नाटक में विचरे हैं। लोंकाशाह के समर्थ साधु 91 वें पट्टधर आत्मारामजी महाराज हुए जो पंजाब सम्प्रदाय लवजी ऋषि से सम्बन्धित थे। वे संवेगी दीक्षा ग्रहण कर श्री विजयानन्द सूरि के, नाम से प्रसिद्ध हुए। पूर्व में इनकी चर्चा हो चुकी है।

3. पू. श्री धर्मसिंहजी, स्थानकवासी सम्प्रदाय उद्धारकों में माने जाते हैं। ये अपूर्व बुद्धिशाली, विचक्षण प्रतिभाशाली थे। स्वल्पकाल में, उन्होंने 32 सूत्र, तर्क, व्याकरण, साहित्य और दर्शन का ज्ञान उपार्जन कर लिया था। इनका सम्प्रदाय 'दरियापुर सम्प्रदाय' दरियानखान यक्ष को प्रतिबोध देने के कारण प्रसिद्ध हुआ। उन्होंने लोंकागच्छ में घुसी हुई कुरीतियों को नष्ट करने की घोषणा की। उनका वी. स. 2198 वि. सं. 1728—ई सं 1671) में स्वर्गवास हुआ। प्रचार क्षेत्र इस सम्प्रदाय का गुजरात, सौराष्ट्र में विशेष रहा है। उन्होंने संयम की बाड़ लगाई और साहित्य रस से उसको सिंचन कर बाड़ी लगाने का काम किया। उन्होंने, श्रावक का प्रत्याख्यान भी छः कोटि से आठ कोटि होता है, ऐसी मान्यता प्रचलित की।

4. पूज्य श्री धर्मदास जी महाराज ने स्वतन्त्र दीक्षा वी. सं. 2186 (वि. सं. 1716 - ई. स. 1659) में ग्रहण की। उससे पहले वी. सं. 2160

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

(वि. सं. 1690—ई सं. 1633) में 'पात्रिया पंथ' चला था जिसमें वे कल्याणजी भाई से दीक्षित हुए थे। इस पंथ के ब्रह्मचारी लाल वस्त्रों में रहते थे। उनका प्रचार क्षेत्र सौराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, मालवा, मेवाड़, मारवाड़ आदि में रहा। उनको शिष्यों सम्पदा 99 प्राप्त हुई, जिसको 22 विभागों में विभक्त करने से 22 बाईस टोला की उत्पत्ति वी. सं. 2242 (वि. सं. 1772—ई. सं. 1715) में महावीर जयन्ती की स्थापना हुई। उनका स्वर्गवास वि. सं. 1769 में हुआ। उनकी परम्परा में आचार्य भीषणजी हुए जो श्री रघुनाथजी के शिष्य थे। आ. भीषणजी ने नया तेरा पंथ संप्रदाय स्थापित किया जिसका वर्णन आगे किया गया है। 2. श्री जीतमल जी भी जो कि तेरा पंथ के महान् जयाचार्य के नाम से हुए हैं, इसी स्थानकवासी सम्प्रदाय से निकले हुए हैं। कवि पू. श्री रतनचन्दजी (स्वर्गवास वि. सं. 1902) ने आगमों का गम्भीर अध्ययन कर हजारों जैनेतरों को जैन धर्मानुयायी बनाया पू. श्री धर्मराज ने वेष रजोहरण, मुखपति, चादर तथा चोलपट्टा रखा। उनके शिष्य मूलचन्दजी म. तथा 9 पट्टधरों से 7 सम्प्रदाय निकले जो लींबड़ी, मांडल, वटवाल, चूडा, धांगध्रा, कच्छ, सावन्ती, बोटाद, खंभात आदि प्रदेशों में प्रसारित हुए। पू. मूलचन्दजी का सम्प्रदाय 'लींबड़ी का वड़ा सम्प्रदाय' माना जाता है।

स्थानक शब्द का प्रयोग आ. जीवराजजी के बाद प्रचलित हुआ क्यों कि उपाश्रय में ठहरने से ममत्व का कारण बन जाना माना जाने लगा। लोंकाशाह 31 शास्त्र मानते थे, लवजी ऋषि ने आवश्यक सूत्र जोड़कर 32 शास्त्र माने और पू. धर्मदासजी ने शास्त्रों पर टिप्पणी लिख कर उनकी वृद्धि की। इस सम्प्रदाय ने, उन टूबबो को प्रमाणित रूप से स्वीकार किया और उसके बाद, स्थानकवासी श्रमणों ने, रास, चौपाई, ढाल, कविता से शास्त्र अनुदीत किये। लोक प्रचार और आत्म साधना इस सम्प्रदाय का लक्ष्य है।

लींबड़ी सम्प्रदाय में कच्छ के निवासी पू. रतनचन्दजी म. स्व. वी. सं. 2410 (वि. सं. 1940—ई. स. 1883) में हुए जो संस्कृत भाषा के धाराप्रवाही प्रवचनकार थे। उन्होंने 'अर्द्ध मागधी कोष' 'जैन सिद्धान्त कौमुदी', 'सुबोध प्राकृत व्याकरण' की रचना की। उन्हें जयपुर में 'भारत रत्न' की उपाधि प्राप्त हुई।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

5. पू. हरजी ऋषि का सम्प्रदाय, कोटा सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध है। इनके 26 पंडित विद्वान् रत्न और 1 साध्वी शिष्य थे, जिनमें से पं. हुक्मीचन्द जी (स्व. वी सं. 2388—वि. सं. 1918—ई. स. 1861) एक उच्च आचारनिष्ठ विद्वान् साधु हो गये हैं। वे महान् तपस्वी थे और बेले-बेले पारणा करते थे अर्थात् दो रोज उपवास कर पारणा यानि तीसरे दिन आहार लेते थे और यह क्रम उनका चलता रहता था। प्रतिदिन 2000 नमुत्थुणं (शक्र-स्तव) से प्रभु स्तुति करते थे।

6. श्री जवाहरलाल जी महाराज भी इसी सम्प्रदाय के थे उनका जन्म वी. सं. 2402 (वि. सं. 1932—ई. स. 1875) में हुआ और 16 वर्ष में दीक्षित हुए। वे बालब्रह्मचारी और शास्त्रों के गहन ज्ञाता थे। तुलनात्मक दृष्टि से समभाव पूर्वक शास्त्रों की तर्क पूर्ण व्याख्या करते थे। उनकी साहित्य सेवा भी अनुपम थी। 'सूत्र कृतांग' की विस्तृत हिन्दी टीका लिखी थी और अन्य मतों की निष्पक्ष आलोचना की थी। लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, वल्लभभाई पटेल, पं. मदनमोहन मालवीय आपके सम्पर्क में आये हैं। उनके प्रवचन नेताओं के लिये ही नहीं, किन्तु ग्रामवासियों के लिये भी आकर्षक होते थे। 'भ्रम विध्वंसन' के उत्तर में 'सद्धर्म मण्डन' ढाल साहित्य रच कर अनुकम्पा (दया) दान के सिद्धान्तों का ग्रामीण लोगों में रस बरसाते थे। आपने पू. श्री गणेशीलालजी महाराज को सादड़ी स्थानकवासी सम्मेलन में उपाचार्य पद प्रदान किया। 23 वर्ष आचार्य पद पर रह कर वी. सं. 2470 (वि. सं. 2000—ई. स. 1943) में दिवंगत हुए।

7. प्रसिद्ध वक्ता पं. मुनि श्री चोथमलजी (जन्म वी. सं. 2404-वि सं 1934—ई. स. 1877) पूज्य हीरालालजी महाराज के शिष्य थे। ये महान् वक्ता तरीके प्रख्यात हुए। उनकी व्याख्यान शैली से बड़े-बड़े लोग प्रभावित हुए और राजा महाराजाओं ने मद्य, माँस और शिकार का त्याग किया। जन साधारण पर इतना असर होता था कि कई एक ने बीड़ी, सिगरेट, जुआ, मद्य, माँस, चोरी आदि दुर्व्यसनों को त्याग दिया। अनेक सरकारों से जीव दया के पट्टे परवाने भी प्राप्त किये। शास्त्रों का दोहन करके, 'निर्ग्रन्थ प्रवचन' ग्रन्थ सम्पादन किया जिसका कई भाषाओं में

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

अनुवाद भी हो चुका है। 'भगवान् महावीर का आदर्श जीवन' भी उनका विशाल ग्रन्थ है जिसमें संक्षेप में जैन धर्म की सादी रूपरेखा है। उन्होंने सिर्फ महाजनों, वेश्यों को ही दीक्षा नहीं दी किन्तु अन्य जातियों के लोगों को भी जैन धर्म में दीक्षित किया। आप 'जगत् वल्लभ' 'जैन दिवाकर' के नाम से प्रसिद्ध थे।

वी. सं. 2376 (वि. सं. 1906 — ई. स. 1849) में अखिल भारतवर्षीय जैन कान्फ्रेन्स हुई तब सारे देश के स्थानकवासी श्रमण 1595 सम्मिलित हुए जिनमें 463 साधु और 1132 साध्वियाँ थी। वे तीस अलग-अलग सम्प्रदाय के थे।[1]

तेरा पंथ की परम्परा :

तेरा पंथ की स्थापना वी. सं. 2287 (वि. सं. 1817—ई. सं. 1760) की आषाढ़ पूर्णिमा को उदयपुर मेवाड़ के राजनगर कस्बे से तीन मील केलवा गाँव में हुई। आद्य प्रवर्तक एवं प्रथय आचार्य भीखणजी—भिक्खु स्वामी—(वी. सं. 2287 से 2330—वि. सं. 1817 से 1860—ई. स. 1760 से 1803) हुए जिन्होंने स्थानकवासी सन्त श्री रघुनाथजी अपने गुरु से वि. सं. 1817 चैत्र सुदी 13 को चार साधुओं के साथ मत-भेद होने से जुदा हुए और बगड़ी में आकर ठहरे। बगड़ी से जोधपुर पधारे तो 13 साधु कुल हो गये जिससे 'तेरा पंथी' नाम से सम्बोधित हुए। जोधपुर से केलवाड़ा आकर निर्जन जैन मन्दिर की अन्धेरी कोठड़ी में कहीं स्थान न मिलने से रहे। वहाँ पर एक सर्प भी निकला और उपसर्ग में रात व्यतीत की। प्रारम्भ में पात्र और आहार की कठिनाई पड़ी किन्तु सब कुछ सहन करके धर्म प्रसार, आगम चर्चा और शिष्यों के प्रशिक्षण में प्रभु को यह विनती की कि यह 'तेरा पंथ' है। तेरा पंथ सम्प्रदाय को अपने समय में आगे बढ़ाया। 38 हजार श्लोक परिमित रागिनी पूर्ण कविताएँ, लिख कर

1 'जैन धर्म का इतिहास' प्रमुखतः श्री श्वे. स्थानकवासी जैन धर्म का इतिहास—लेखक : मुनि श्री सुशीलकुमार जी। प्रकाशक मन्त्री सम्यग् ज्ञान मन्दिर। 87 धर्म तल्ला स्ट्रीट कलकत्ता।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन साहित्य में अपना योगदान दिया। इनका साहित्य 'भिक्षु रत्नाकर' पुस्तक में संकलित है। आचार्य भीषणजी निपुण और कुशाग्र बुद्धि वाले थे।

2. तेरा पंथ के दूसरे आचार्य भारमलजी (वी. सं. ,330 से 2348 वि. सं. 1860 से 1878—ई. स. 1803 से 1821) हुए जिन्होंने मेवाड़, मारवाड़, ढूंढाई और हाड़ौती में इस पंथ का प्रचार और प्रसार किया। वे सुदृढ़ अनुभवी शासक हो गये हैं।

3. तीसरे आचार्य रायचन्दजी 'ऋषिराय' (वी. सं. 2348 से 2378—वि. सं. 1878 से 1908—ई. स. 1821 से 185) हुए हैं जिन्होंने अपना क्षेत्र मेवाड़, मारवाड़, ढूंढाड़ आदि प्रदेशों से आगे मालवा गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छ तक बढ़ाया। वे धर्म चर्चा में विशेष रुचि रखते थे एवं तपस्या प्रेरक सन्त थे। आगमों का अर्थ सहित अध्ययन किया था। सरस व्याख्याता भी थे।

4. चौथे आचार्य जीतमलजी जयाचार्य (वी. सं. 2378 से 2408 वि. सं 1908 से 1938 ई. स.1851 से 1881) थे जिनका समय तेरा पंथ का निर्माण काल माना जाता है। उनके समय में तेरा पंथ का सर्वतोमुखी विकास हुआ। सब सिंघाड़ों (छोटे सम्प्रदायों) की पुस्तकों को मंगवा कर समान वितीर्ण किया और तेरा पंथ के श्रमणों की मर्यादाओं का वर्गीकरण किया। ये प्रभावशाली आचार्य हुए हैं और उनके उपदेश से मेवाड़ के महाराणा भीमसिंहजी एवं युवराज जवानसिंहजी पर अच्छा प्रभाव हुआ। इनका समस्त जीवन श्रुत उपासना में बीता। 3 लाख पद्य प्रमाण साहित्य आगमों की 'जोड' पद्य टीका कर जैन शासन को उपकृत किया। भक्ति पटक अनेक स्तुतियाँ रचीं जिनमें तीर्थङ्करों की स्तुतियाँ, 'लघु चौबीसी' तथा 'बड़ी चौबीसी प्रसिद्ध हैं। इनका विहार क्षेत्र, मारवाड़, मेवाड़, मालवा, ढूंढाई, हाड़ौती, गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, हरियाणा, दिल्ली प्रदेश रहा।

5. पाँचवें आचार्य श्री माधव गणि (वी. सं. 2408 से 2419—वि. सं 1938 से 1949—ई. स. 1881 से 1892) थे। वे अपनी सरल प्रकृति, शाँत प्रकृति, पाप भीरुता, स्थिर बुद्धि से सर्व प्रिय हो गये हैं। तेरा पंथ समाज में संस्कृत के प्रथम विद्वान् और जैनागमों के धुरन्धर पंडित

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

थे। मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा फतहसिंहजी ने उदयपुर में सांवलदासजी की बाड़ी में उनके दर्शन किये थे।

6. छठे आचार्य श्री माणक गणि (वी. सं. 2419 से 2424—वि. सं. 1949 से 1954—ई. स. 1892 से 1897) हुए जो दयालु, उदारमन और देशाटन की तीव्र रुचि वाले सन्त थे। उनका विहार क्षेत्र मेवाड़, मारवाड़, ढूंढाड़, थली हरियाणा आदि रहा है। उन्होंने अपना जीवन सैद्धान्तिक ज्ञान अर्जित करने में व्यतीत किया और संस्कृत विकास की ओर ध्यान दिया।

7. सातवें आचार्य श्री डाल गणि (वी. सं. 2424 से 2436—वि सं. 1954 से 1966 ई.स. 1897 से 1909 माने) जाते हैं जो कच्छ के श्री पूज्य तरीके प्रसिद्ध हुए। वे सिद्धान्तवादी, निर्भीक और तेजस्वी आचार्य थे। उनका विहार अधिकतर थली (बीकानेर) मारवाड़, मेवाड़, ढूंढाड़, मालवा, गुजरात, कच्छ आदि प्रदेशों में हुआ। उन्होंने पालीताणा जाकर शत्रुञ्जय की यात्रा भी की थी।

8 आठवें आचार्य श्री कालू गणि (वी.सं 2436 से 2462– वि. सं. 1966 से 1992—ई स 1909 से 1935), पुण्यवान् प्रभावशाली न्यायवादी हुए हैं जिनका जन्म शताब्दी समारोह वि सं 2033 में मनाया गया था। तेरापंथ के लिये उनका शासनकाल स्वर्णिम काल गिना जाता है। उनके समय में, पुस्तक भण्डार, श्रमण संघ, श्रावक वर्ग, कला विज्ञान उपकरण व लिपि का विकास और विस्तार हुआ। भारत में सर्व क्षेत्रों में साधु भेजकर तेरा पंथ का प्रचार व प्रसार किया। उनका विहार क्षेत्र थली, मेवाड़ मारवाड़, ढूंढाड़, पंजाब, हरियाणा माना जाता है। ये संस्कृत विद्या के वट-वृक्ष थे और उनकी कृति 'भिक्षु शब्दानुशासन' प्रसिद्ध ग्रंथ के रूप में प्रकट हुई। यही नहीं स्वयं अध्ययन करते थे और अध्यापन कराते भी थे। बालक साधुओं के भावी जीवन के निर्माणकर्त्ता थे। वे स्वमत परमत सिद्धान्तों के मर्मज्ञ और काव्यप्रेमी भी थे। उन्होंने तेरा पंथ समाज की भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति की। तेरा पंथ को ये मातृ वात्सल्य पूर्ण आचार्य मिले।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

9. नवें वर्तमान आचार्य श्री तुलसी मणि (तुलसी) हैं जो वी. सं. 2463 (वि. सं. 1993—ई. सं. 1936) में आचार्य पद पर आरूढ़ हुए। तेरा पंथ ने चतुर्मुखी प्रगति की और यह प्रगति चल रही है। तेरा पंथ का अभूतपूर्व विकास, प्रचार और प्रसार होता जा रहा है। विहार क्षेत्र भी सारे देश में बढ़ता जा रहा है। जन-जन में तेरापंथ से परिचित कराने वाले सन्त हैं। सभी धर्मों के सम्प्रदायों को आदर की दृष्टि से देखने वाले प्रथम तेरा पंथी जैनाचार्य हैं। भू-मण्डल के अनैतिकता और दुराचार दूर करने का इनका लक्ष्य है और इस दिशा में 'अणुव्रत' आन्दोलन का वि. सं. 2005 (ई. सं. 1948) से प्रवर्तन किया और देश में अध्यात्म भाव और नैतिकता का उत्थान कर रहे हैं। विनोबा भावे ने अणुव्रत के नकारात्मक नियम अधिक होने से उसका समर्थन किया है। प्राचीन रूढ़ियों और अन्ध-विश्वासों के विरुद्ध मेवाड़ में परिवर्तन लाने के लिए 'नये मोड़' की भी योजना रखी। उन्होंने अपनी प्रबल वक्तृत्व शक्ति से हजारों लोगों को, मद्य, मांस, भांग, तम्बाकू आदि दुर्व्यसनों से मुक्त किया। स्याद्वादी जीवन उनका है और व्यक्तिगत से समष्टिगत जीवन के प्रेरक हैं। उन्होंने ग्रामीण, हरिजन आदि समस्त जनता से सम्पर्क रखते हुए, राष्ट्र-नेता और शासक-वर्ग में धर्म का प्रचार किया है और कर रहे हैं। तेरा पंथ के मन्तव्यों का परमत सहिष्णुता दिखलाते हुए निर्भीकता के साथ निरूपण किया है। प्राकृत संस्कृत और हिन्दी में उन्होंने व उनके शिष्य वर्ग ने रचना की है और उनके विद्वान् लेखक, आशुकवि, शतावधानी आदि शिष्य हैं। आचार्य श्री तुलसी मुनि ने श्रमणों और श्रमणियों के अध्यापन की भी व्यवस्था की है। आध्यात्मिक शिक्षा-क्रम नाम से पाठ्य-क्रम व परीक्षा प्रणाली प्रारम्भ की है। साध्वियों का भी साधु की तरह दर्शनशास्त्र का अध्ययन चलता है।

आचार्य तुलसी न केवल संघ के प्रबल व्यवस्थापक और संरक्षक हैं अपितु साहित्य के पद्य और गद्य दोनों के सृजक भी हैं। उन्होंने हिन्दी, संस्कृत और राजस्थानी में अपनी लेखनी चलाई है। काव्य दर्शन, उपदेश, भजन तथा स्तवन आदि की रचना की। 'माणिक महिमा', डालिम चरित्र', 'कालूयशी विलास' के ग्रन्थ के रचयिता हैं। संस्कृत में 'जैन साहित्य दीपिका'

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ग्रौर 'भिक्षु न्याय कर्णिका' ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी निश्रा में तेरा पंथ का द्विशताब्दी समारोह बड़े ठाठ बाट से वि. सं. 2017 ग्राषाढ़ पूर्णिमा (8 जुलाई 1960) को मनाया गया, जिसमें राष्ट्र के नेता और विद्वान् डॉ. राधाकृष्णन्, श्री मन्ननारायण, श्री जयप्रकाश नारायण और राजस्थान के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री मोहनलाल सुखाड़िया ग्रादि सम्मिलित हुए थे। यह समारोह केलवा में मनाया गया जबकि ग्राचार्य श्री तुलसी का चतुर्मास राजनगर में था। उस समय 480 साध्वियाँ करीब 40हजार व्यक्ति 550गांवों के एकत्रित हुए थे। भूतपूर्व सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री वी. पी. सिन्हा ने इस समारोह का उद्घाटन किया था। ग्राचार्य श्री तुलसी मणि की रजत बनाम धवल समारोह भी उनके 25 वर्ष ग्राचार्य पद पर होने के उपलक्ष में मनाया गया ग्रौर "ग्राचार्य श्री तुलसी ग्रभिनन्दन ग्रन्थ" डॉ. राधाकृष्णन् ने समर्पित किया। सम्पादक मण्डल की ग्रोर से श्री जयप्रकाश ने भाषण दिया तथा इस ग्रवसर पर श्री मन्नारायण का भी भाषण हुग्रा ग्रौर इनकी ग्रध्यक्षता में 'ग्रणुव्रत विचार परिषद्' भी संयोजित हुई।

तेरा पंथ की यह लगभग 200 वर्ष की कहानी है। तेरा पंथ का संगठन एक ग्राचार ग्रौर एक विचार ग्रनुकरणीय है।[1]

भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव :

राजा सम्प्रति, राजा कुमारपाल ग्रौर सम्राट् ग्रकबर के राज्यकाल में क्रमशः ग्रार्य सुहास्ति कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य ग्रौर जगत्गुरु श्री हीरविजयजी सूरि के सदुपदेशों से जो जैन धर्म का उद्योत हुग्रा, उससे भी महान् जैन धर्म का विश्व-व्यापी प्रचार ग्रौर प्रसार, भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात्, देश ग्रौर विदेश में दिनांक 13 नवम्बर 1974 से एक वर्ष तक, भगवान् महावीर के 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव मनाने से हुग्रा। यह एक ग्रभूतपूर्व महोत्सव था जिसको सर्व सम्प्रदायों के जैन श्रमणों (कुछ छुटपुट को छोड़ कर) ग्रौर जैन श्रावकों ने एक मंच पर एकत्रित होकर उल्लासपूर्वक

1 तेरा पंथ का इतिहास (खण्ड 1) लेखक मुनि श्री बुद्धमलजी, वि. सं. 2001, प्रकाशक : साहित्य प्रकाशन समिति कलकत्ता।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सम्पादन किया। जैन ही नहीं जैनेतरों ने भी सहयोग दिया। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद और तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने केन्द्रीय स्तर पर और राज्यपालों और मुख्यमन्त्रियों ने राज्य स्तर पर तथा जिलाधीशों ने जिला स्तर पर, सारे देश में इस महोत्सव हेतु समितियों का संयोजन कर, प्रोत्साहित किया और उदार दिल से आर्थिक सहायता भी प्रदान की। यहीं नहीं अमेरिका, इङ्गलैण्ड और अन्य देशों में जहाँ भारत के राजदूतालय स्थित हैं, भगवान् महावीर का 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव शानदार तरीके से मनाया गया।

उपलब्धियाँ :

वर्ष भर में विविध कार्यक्रम मनाये गये किन्तु 13-11-1974 निर्वाण दिवस से आठ दिन तक बड़ी धूम-धाम रही जिसका सारांश रूप में विवरण इस प्रकार है—

1. देश के अनेक स्थानों पर सार्वजनिक सभाएँ, प्रवचन, भाषण, शोभा-यात्रा, प्रभात-फेरियाँ, स्नात्र-महोत्सव, महापूजन आदि का आयोजन हुआ।
2. भगवान् महावीर सम्बन्धी निबन्ध, चित्रकला, संगीत आदि साहित्यिक और कलात्मक कार्यक्रम हुए और पुरस्कार स्पर्धा रखी गई जिनमें से सबसे बड़ा पुरस्कार दिल्ली की निर्वाण महासमिति ने 8000 रुपयों का घोषित किया।
3. अनेक स्थानों पर जैन संस्कृति, तत्त्वज्ञान, इतिहास, शिल्प, स्थापत्य आदि विषयों पर ज्ञान गोष्ठियाँ, परिसंवाद, कवि सम्मेलन, मुशायरे, प्रदर्शनियाँ, झाँकियाँ, रंगोलियाँ आदि का संयोजन किया गया। जिससे जैन इतिहास, विकास और धर्म-चिंतन पर साधारण जनता प्रभावित हो सके।
4. विविध राज्यों में शिकार, कत्ल-खाने, निश्चित दिनों तक बंद कराये जाने की घोषणाएँ हुईं। अमारि (अहिंसा) का प्रवर्तन कराया गया। कारावास की सजाओं में कमी करने, फाँसी की सजा रद्द करने व

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

आजीवन कारावास की सजा में परिवर्तन करने आदि के विशेष आदेश कुछ राज्यों में जारी किये गये।

5. लोकोपकारी कई कार्य हुए जिनमें से अशक्तों को भोजन, बालकों को मिठाई, अस्पताल के रोगियों को फल, अंधजनों को वस्त्र और धन दान एवं विकलांगों की सहायता करना मुख्य है।

6. निर्वाण महोत्सव की स्मृति में चांदी के सिक्के भी बनाये गये और बिहार में पावापुरी के जैन मन्दिर भगवान् महावीर का निर्वाण स्थल की छाप वाला डाक टिकट जारी किया गया।

7. देश में भगवान् महावीर के नाम की शिक्षण संस्थाएं स्थापित हुई और कुछ विश्वविद्यालयों में जैन शोध-संस्थान भी खोले गये तथा सार्वजनिक पुस्तकालय, वाचनालय और संग्रहालय में महावीर कक्ष कायम किये गये।

8. सैंकड़ों की संख्या में भगवान् महावीर और जैन धर्म के विषय पर पुस्तकें, चित्र-संग्रह, अनेकानेक सामयिक समृद्ध और सचित्र विशेषांक और स्मारिकाएं प्रकाशित की गईं।

9. आकाशवाणी (आल इण्डिया रेडियो) पर जैन स्तवन, भजन, भाषण सुनाये गये और जैन तीर्थ सम्बन्धी दस्तावेजी (डोक्यूमेण्ट्री) फिल्में भी बनी।

10. देश भर में भगवान् महावीर का 'धर्मचक्र' घूमा और कई नगरों, कस्बों और गाँवों में धर्म-चक्र की शोभा यात्राएं निकलीं जिसमें सहस्रों नर-नारियों ने भगवान् महावीर की जय बोली। जैन मन्दिरों, उपाश्रयों और स्थानकों में तप, जप, ध्यान के अनुष्ठान सम्पादित हुए।

जैन-धर्म के अलग-अलग सम्प्रदायों में भाईचारा और सहकार को प्रोत्साहन देने के लिये एक जैन-प्रतीक[1] और एक जैन-ध्वज[2] प्रचलित किया गया और सर्व सम्प्रदायों के श्रमणों का मान्यता प्राप्त जैन धर्म का

1 जैन-प्रतीक के महत्व के लिये परिशिष्ट 3 पृ. 75-76 देखें।

2 जैन-ध्वज की विशिष्टता के लिए परिशिष्ट 5 पृ. 86 अवलोकन करें।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

सार रूप ग्रन्थ मूल प्राकृत, संस्कृत और हिन्दी भाषा में प्रकाशित हुआ जिसका नाम 'सम्मरण-सुत्त' रखा गया ।

12. बिहार राज्य में श्रमण श्री अमर मुनि की प्रेरणा से राजगृही में 'वीरायतन' और राजस्थान के लाडनू में आचार्य श्री तुलसी गणि के उपदेश से 'जैन विश्व भारती', पंजाब में महावीर फ़ाउण्डेशन, आसाम में अहिंसा समाज आदि चिर स्थायी संस्थाओं के स्थापित किये जाने के निर्णय लिये गये और कहीं कहीं उनका कार्य भी प्रारम्भ हो गया । केन्द्र और राज्य सरकारों ने एतदर्थ धन, भूमि आदि देकर सहायता प्रदान की ।

भगवान् महावीर के उपदेश केवल जैनियों के लिये ही नहीं थे किन्तु विश्व के समस्त प्राणियों के उपकार के लिये थे । अत: उनके धर्मोपदेश का विविध प्रकार से व्याख्यानों, भाषणों द्वारा प्रचार किया गया । कुछ स्थानों पर, उनके सदुपदेश महावीर-स्तम्भ निर्माण किये जाकर उनके शिलापट्ट पर अंकित किये गये । विशाल जन-समूह ने भक्ति-भरी और भाव-भीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण महोत्सव को सजीव, सार्थक और सफल बनाया । इस वर्ष से भिन्न-भिन्न राज्यों में जो कार्य किये गये और किये जाने के संकल्प लिये गये, उनका सूक्ष्म अवलोकन आगे किया जाता है ।

विविध राज्यों में महावीर निर्वाण महोत्सव–

सबसे प्रथम दिल्ली भारत की राजधानी से प्रारम्भ करते हैं । भूतपूर्व राष्ट्रपति स्व. श्री फखरुद्दीन अली अहमद ने 13 नवम्बर 1974 के दिन भगवान् महावीर की अन्तिम चरण स्पर्शित पावन भूमि पावापुरी के जल मन्दिर की प्रतिकृति वाला खास डाक टिकट का उद्घाटन किया । राष्ट्रभवन के प्रसिद्ध अशोक हॉल में, भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण कल्याणक महोत्सव का मंगल प्रारम्भ किया । उद्घाटन समारम्भ में राष्ट्रपति ने कहा कि भगवान् महावीर ने अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त और सहिष्णुता का मार्ग बतलाया, जिस पर चलने से ही अपनी समस्याओं का समाधान हो सकता है । निर्वाण महोत्सव आठ दिन तक चला । 13 नवम्बर को ध्वजारोहण, निर्ग्रन्थ

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिषद्, 15 को श्रमण संस्कृति परिषद्, 18 को निर्वाणवादी विचार-धारा के योगदान पर संविवाद, 19 को अनेकान्त परिषद् और 20 को भावी विकास योजनाएँ दीक्षा समारम्भ आदि विविध कार्यक्रम हुए।

भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण कल्याणक के ऐतिहासिक और मंगल दिवस के दिन, भूत-पूर्व प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भारतीय संस्कृति के ही नहीं, विश्व के ज्योतिर्धर परमतारक तीर्थंकर परमात्मा भगवान् श्रीमहावीर स्वामी की भावभीनी वन्दना करते हुए कहा कि आज से ढाई हजार वर्ष पहले भगवान् महावीर ने जो सत्य की शोध की वह आज भी उतनी ही सत्य है। दिनांक 17-11-74 को दिल्ली के रामलीला मैदान पर दो लाख मेदिनी की भारी सभा का आयोजन हुआ। इस सभा की अध्यक्षता श्रीमती इन्दिरा गांधी एवं दो लाख जनसमूह का, अखिल भारतीय निर्वाण महोत्सव समिति के प्रमुख सेठ श्री कस्तूरभाई लालभाई ने स्वागत किया। सेठ श्री के स्वागत भाषण और भूतपूर्व बड़े प्रधान के प्रवचन के बाद, आ. श्री विजय-समुद्रसूरिजी, आ. श्री तुलसीजी, आ. श्री धर्मसागरजी, उपाध्याय श्री विद्या-नन्द मुनिजी ने अपने-अपने प्रवचनों में भगवान् महावीर का गुणानुवाद किया। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अध्यक्ष-पद से बोलते हुए कहा कि धर्म के प्रति अपनी श्रद्धा के लिये, दूसरे क्या कहेंगे इसकी चिन्ता नहीं करना चाहिये और अपने को अपने मार्ग पर ही चलते रहना चाहिये। भगवान् महावीर ने अहिंसा, अपरिग्रह और सत्य को सबसे अधिक महत्व दिया था। आधुनिकता और विज्ञान की नई जगमगहाट में भी, जीवन में स्थायी शान्ति और विश्व-कल्याण के लिये, उनके सिद्धान्त, आज भी उतने ही मूल्यवान् हैं। उन्होंने और कहा कि सहिष्णुता भारतीय संस्कृति की महान् और सबसे बड़ी देन है। भगवान् महावीर ने अहिंसा को परमधर्म माना था। महात्मा गांधी तक, यही विचार सर्वोपरि रहा है। भगवान् महावीर को अपनी श्रद्धांजलि अहिंसा के मार्ग पर चलने का व्रत लेकर ही अर्पण कर सकते हैं। महा-समिति के कार्याध्यक्ष साहु श्री शान्तिप्रसाद जैन ने आभार वादन किया और श्रीमती इन्दिरा गांधी को श्री अमलानन्द घोष संपादित 'जैन कला और स्थापत्य' नाम का बहुमूल्य ग्रन्थ भेंट दिया। 16 नवम्बर 1974 को 7 मील

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

से अधिक विराट् शोभा-यात्रा निकली जिसमें श्रमण श्रावक और हजारों की संख्या में भारत के नर-नारी सम्मिलित हुए। भारत सरकार ने महावीर मेमोरियल–महावीर स्मारक के लिये दिल्ली में 4 एकड़ भूमि प्रदत्त की। इस स्मारक में जैन कलाकृतियों एवं चित्रों का संग्रह जैन साहित्य का विशाल पुस्तकालय तथा जैन विद्या के अध्ययन और शोध कार्य के लिये गठित राष्ट्रीय परिषद् का मुख्य कार्यालय रहेगा। दूसरे कार्य वनस्थली निर्माण, महावीर वाटिका, नेशनल काउन्सिल आफ जेनोलोजिकलस्टडी एण्ड रिसर्च सोसायटी, जिन धर्म संगीत सोसायटी एवं दिल्ली विश्वविद्यालय में जैन चेअर आदि स्थापित करने के निर्णय•लिये गये।

आन्ध्र प्रदेश हैदराबाद में 20 करोड़ के व्यय से निर्माण कराये जाने वाले महावीर संकुल (महावीर कम्पलेक्ष) का शिलारोपण किया गया जिसमें अद्यतन होस्पिटल, ओडिटोरियम, वाचनालय और संशोधक पेड़ रहेगा।

आसाम की राजधानी गोहाटी (गोहाटी) में 3 लाख का भगवान् महावीर बाल उद्यान, 2 लाख रुपये का दिगम्बर महावीर भवन बनाये जाने का निश्चय हुआ।

बिहार में 2500 वां निर्वाण दिवस के दिन जल मन्दिर में निर्वाण मोदक चढ़ाने की बोली 1 लाख 51 हजार की श्री मणिलाल डोसी दिल्ली वाले की हुई और उन्होंने सबसे प्रथम निर्वाण लड्डू चढ़ाया। इस अवसर पर पावापुरी में, 1 लाख रुपये से अधिक यात्री एकत्रित हुए थे और 10 नवम्बर को श्री आर. डी. भण्डारे तत्कालीन राज्यपाल बिहार ने निर्वाणोत्सव का उद्घाटन किया और उपाध्याय श्री अमरमुनि, अनुयोगाचार्य श्री कान्तिसागरजी, मुनि श्री रूपचन्दजी आदि श्रमणों और प्रिय दर्शना श्रीजी, शशि प्रभाश्रीजी, महासती श्री चन्दनाजी आदि श्रमणियों ने भगवान् महावीर का गुणानुवादन किया। राजगृही में 15 नवम्बर को भव्यरथ-यात्रा निकली जिस पर आकाश से पुष्प-वृष्टि की गई। वीरायतन की वस्त्रदान, नेत्रदान और विद्या-दान की योजनाएँ बनाई गई।

पश्चिम बंगाल में श्री विजयकुमार बनर्जी (भूतपूर्व, विधान सभा अध्यक्ष) की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई जिसमें उन्होंने कहा कि महात्मा

Shreé Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

गांधी भगवान् महावीर की अहिंसा से प्रभावित हुए थे, परन्तु भगवान् महावीर की अहिंसा महात्मा गांधी की अहिंसा से गहरी थी।

तामिलनाडु में 'भगवान् महावीर अहिंसा प्रचार संघ' कायम हुआ। 17-11-74 को विराट् रथ-यात्रा निकली जिसमें 126 झाँकियाँ दिखाई गई और भजनों की स्पर्धा अच्छी रही। गुजरात के मन्दिरों में सामूहिक स्नात्र, पंचाह्निका और अष्टाह्निका पूजा के आयोजन रहे। महावीर जीवन प्रसंग पर रंगोलियाँ सजाई गई और उन पर 2500 दीपक और 2500 साथीये किये गये। भद्रेश्वर (कच्छ) तीर्थ में कीर्ति-स्तम्भ ध्यान मन्दिर के निर्माण करने के निर्णय लिये गये। अहमदाबाद में 72 फीट ऊँचा कीर्ति-स्तम्भ हट्ठीभाई के देरासर में निर्माण करने का निश्चय किया गया। इसी प्रकार पालीताणा में श्री महावीर जैन होस्पिटल 5 लाख के खर्च पर बनाया जाना तय हुआ। पालीताणा में शत्रुंजय (सिद्धाचल) पर्वत के पहले हडे 15000 बार भूमि पर श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जैन देरासर की पेढ़ी, 25 लाख के खर्च पर 'वीर वर्धमान विजय स्तंभ', भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण वर्ष के उपलक्ष में विचार कर रही है। योजना इस प्रकार है—नौ मंजिल का यह स्तम्भ 108 फीट ऊँचा एक भव्य मन्दिर सदृश होगा। प्रत्येक मंजिल की दीवारें चित्रों, स्थापत्यों, रचनाओं, लेखों आदि से खचित रहेगी। नवीं मंजिल पर भगवान् महावीर स्वामी की काय-प्रमाण चौमुखी प्रतिमा स्थापित होगी। स्तंभ के सन्निकट 5 लाख रुपये की लागत का एक विशाल, और अजोड़ महासुघोषा घंट होगा जो दिन में एक बार बजेगा और उसकी ध्वनि 12 मील तक सुनाई देगी। स्तंभ के पिछले भाग में एक विशाल उपवन बगीचा होगा। जिसमें भाँति-भाँति के पारिजात, आम, अशोक, नीम, आसा-पाला आदि वृक्ष, बेलड़ियाँ लगाये जायेंगे और बगीचे में 25 पर्वतों की कृत्रिम रचनाएं भी होगी। इस रचना के पीछे मुख्य हेतु यहाँ के वातावरण को पवित्र रखने और यात्रियों को पवित्रता का अनुभव कराये जाने का है। भावनगर में 'महावीर नगर' और 'क्षत्रिय-कुण्ड' की रचना बनाने का निर्णय लिया गया।

गोवा में दिनांक 13-11-74 से 24-11-74 तक दारू, मांस रहित

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

दिवस की घोषणा हुई। राजधानी पणजी में मन्दिर तथा संयुक्त सभा-गृह के लिये बिना मूल्य-राज्य सरकार ने जमीन दी, ग्राम सभा में बड़ी संख्या में ईसाई भाई सम्मिलित हुए।

उत्तर प्रदेश में सबसे बड़ा कार्य जो राज्य सरकार ने किया वह यह है कि 13 नवम्बर 1974 के बाद अदालतों ने 13 नवम्बर 1974 या उसके बाद देहांत, फाँसी की सजा देवें तो उसको साधारण किस्मों को अपवाद मान कर देहान्त दण्ड की सजा को आजीवन कैद की सजा में बदलने का आदेश भारत सरकार की स्वीकृति लेकर प्रचलित किया। बरेली और हरिद्वार में महावीर स्मृति केन्द्र के भवन के लिये बिना मूल्य जमीन राज्य सरकार उत्तर प्रदेश ने प्रदान की। उत्तर प्रदेश की राजधानी, लखनऊ में 'महावीर उद्यान और स्मारक' तथा 'महावीर स्मृति केन्द्र', आगरा में 'महावीर-पार्क' व 'महावीर ओडिटोरियम' और 'पक्षी-चिकित्सालय' बनाना निश्चित किया तथा फिरोजाबाद में 45 फीट ऊँचा श्री बाहुबलीजी की मूर्ति स्थापित की गई।

हिमाचल प्रदेश में भी प्रार्थना प्रवचन और विविध कार्यक्रम हुए।

हरियाणा राज्य में, हरिजनों के लिये छात्रालय, जगधारी में 'जैन गर्ल्स हाई स्कूल', करनाल में 'महावीर थियेटर' और गुडगांव में 'महावीर पार्क' निर्माण की योजना स्वीकृत हुई।

जम्मू व कश्मीर में श्री शेख अब्दुल्ला मुख्यमन्त्री ने महावीर जयन्ती महोत्सव के भाषण में; भगवान महावीर को महान धार्मिक और सामाजिक नेता मानते हुए, न्याय और समानता का नैतिक मूल्यों का प्रचारक बतलाया। जम्मू में 23 मई सन् 1975 के दिन आ. श्री सभद्रसूरिजी के वरद् हस्त से नव निर्मित जिनालय में मूलनायक श्री महावीर स्वामी की मूर्ति की प्रतिष्ठा हुई। राज्य में महावीर जयन्ती के दो दिन ड्राई डे रहा यानी शराब बिक्री बन्द रही।

कर्णाटक राज्य के विश्वविद्यालय में जैन चेयर और 'आध्यात्मिक विचारधारा में जैन धर्म की उपादेयता' पर संवाद (जिसमें देश विदेश के

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

विद्वानों ने भाग लिया), बैंगलौर में तीन दिन तक जैन धर्म और कन्नडी साहित्य पर संवाद तथा जैन तीर्थों के फिल्म का प्रदर्शन हुआ।

केरल में जैन धर्म पर संवाद हुआ और विश्व शान्ति के लिए प्रार्थना की गई।

मध्यप्रदेश के उज्जैन के विक्रम विश्वविद्यालय में जैन चेयर भोपाल में 'वर्धमान पार्क, इन्दौर में 'स्वाध्याय भवन' और अन्यत्र स्थानों पर 27 कीर्ति स्तम्भ स्थापित करने के निर्णय लिये गये। उज्जैन में 11 लाख के फण्ड से 'सांस्कृतिक स्मारक' बनाने और मानव राहत के कार्य करने का निश्चय किया गया। ग्वालियर में प्रसिद्ध उद्योगपति श्री घनश्यामदास जी बिडला ने भगवान महावीर निर्वाण महोत्सव स्मारक फण्ड द्वारा बनने वाले 'महावीर भवन' के लिए ढाई लाख का दान दिया।

मणिपुर में 'भगवान महावीर आरोग्य भवन' 1 लाख रुपये खर्च कर बनाने का निर्णय हुआ।

महाराष्ट्र बम्बई में आ. विजयधर्मसूरीश्वर जी के शिष्य पूज्य साहित्य कलारत्न मुनिराज श्री यशोविजयजी ने तीर्थंकर भगवान महावीर चित्र सम्पुट की रचना की जिसके चित्र श्री गोकुलभाई कापड़िया ने बनाये थे। प्लास्टर ऑफ पेरिस के विशाल पावापुरी जिनालय, बालकेश्वर में बना और विपुल साहित्य का वितरण हुआ। मलाबार हिल पर विशिष्ट कोटि का 'कीर्ति स्तम्भ' निर्माण किये जाने की योजना भी बनी है। राज्य सरकार ने 2 वर्ष के लिए शिकार पर प्रतिबन्ध लगाया है, आकोला में भी भगवान महावीर कीर्ति स्तम्भ, ईचलकरंजी में श्री महावीर जैन औषधालय, पूना (पूर्णे) में अजोड़ रथ-यात्रा निकली और जैन प्रदर्शनी लगाई गई, सांगली में कठपुतली द्वारा भगवान महावीर का जीवन प्रदर्शन हुआ। सोलापुर में 'महावीर अतिथि भवन व जैन म्यूजियम' निर्माण का निर्णय लिया। वर्धा में 'भगवान महावीर स्मृति भवन' बनाने का निश्चय किया गया और आचार्य विनोबा भावे ने इस अवसर पर सर्व सेवा संघ के हर एक सेवाभावी कार्यकरों को मांसाहार, मछली, अण्डा का जीवन भर त्याग करने के लिए अनुरोध किया।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

नागालैण्ड के दीमापुर में 'भगवान महावीर पार्क' और पार्क में संगमरमर का कीर्तिस्तम्भ निर्माण हुआ।

उड़ीसा में 'अहिंसा दर्शी समाज' की रचना हुई जिसमें 5 नियम स्वीकार किये गये।

(1) जीवन भर माँसाहार न करना।
(2) दारू न पीना और न जुआ खेलना।
(3) सदाचारी रहना और अहिंसात्मक व्यवहार रखने का प्रयत्न करना।
(4) रोज 10 मिनट या यथा-शक्ति समय तक आत्म निरीक्षण करना।
(5) सर्व धर्म समन्वय की भावना के विकास व प्रचार के लिए सम्पूर्ण साथ देना।

पंजाब में जिलों के बड़े-बड़े स्थान पर कीर्ति स्तम्भ बनाये जाने का निश्चय हुआ। चण्डीगढ़ में दहेज-प्रथा रोकने के लिए युवा वृद्धों ने प्रतिज्ञा ली और आत्मानन्द जैन महासभा द्वारा, लगभग 10 लाख के खर्च पर महावीर पब्लिक स्कूल और 'जैन अमर होस्टल' का निर्माण हो रहा है। पंजाब सरकार ने 'महावीर ओपन थियेटर'के लिये 10 हजार का अनुदान दिया और राज्य में 25 महावीर स्कूल भी बना रही है। इसके अतिरिक्त 13 दिसम्बर 1974 के दिन या इससे पहले या उस दिन जिनको मृत्यु दण्ड मिला है, उसको (सिवाय उन अभियोगी के जो पेराग्राफ 3 में दिये गये हैं) आजीवन कारावास में परिवर्तित करने की घोषणा की। इसके अतिरिक्त भी राज्य में कई शुभ कार्य हुए जो 'लोर्ड महावीर फाउण्डेशन' द्वारा सम्पादन हुए।

राजस्थान राज्य में 3500 कैदियों की सजा में कमी की और 4 को मृत्यु दण्ड की सजा माफकर आजीवन कैद में बदली। निर्वाण वर्ष शान्ति वर्ष घोषित हुआ। 30 जिला पुस्तकालयों में, तीन विश्वविद्यालयों में, पुस्तकालय सहित महावीर कक्ष खोले गये और इसी प्रकार 8 राजकीय संग्रहालयों में महावीर कक्ष की स्थापना का आदेश जारी किया गया। विश्वविद्यालय उदयपुर और राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर में जैन चैयर की

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

स्थापना होना निश्चित किया गया। उदयपुर विश्वविद्यालय जैन चैयर (शोध संस्थान) हेतु अखिल भारतीय स्थानकवासी समाज ने 2 लाख रुपये का अनुदान भेंट और एक लाख रुपये की सहायता राज्य सरकार ने देना निश्चित किया।

'राजस्थान जैन संस्कृति ग्रन्थ' जिनवाणी का विशेषांक प्रकाशित हुआ। नाकोड़ा तीर्थ में ग्रामीण पुस्तकालय की स्थापना का निर्णय लिया गया। उदयपुर में 'महावीर-स्मारक निर्माण' बाबत निश्चित हुआ। जयपुर में विकलांगों के लिये 'भगवान् महावीर विकलांग समिति' की रचना हुई जिनका उद्देश्य विकलांगों को कृत्रिम अंग मुफ्त बिठाकर देने का है। इस निमित्त 2 लाख रुपये राज्य सरकार और 3 लाख रुपये जैन समाज ने सहायतार्थ दिये। जिला बाड़मेर में अन्य भव्य आयोजना लगभग 60 लाख की जनहित के लिये बनी जिसमें बाड़मेर, जैसलमेर, सड़क पर 'भगवान महावीर विश्रामगृह' का निर्माण, 6 लाख खर्च पर भगवान महावीर ओडिटोरियम (रंगमंच) बालोत्तरा में 'भगवान महावीर सरकारी दवाखाना', सार्वजनिक चिकित्सालय तथा बाल विकास केन्द्र आदि की 8 लाख की योजना बनी। बीकानेर में 'महावीर वाटिका' बनी जिसमें भगवान महावीर के उपदेश शिलालेख पर अंकित होंगे, गंगा शहर में 'महावीर होम्योपेथिक चिकित्सालय,' ब्राह्मणवाड़ा में आधा करोड़ धन से महावीर मिशन हॉस्पिटल की योजना बनी तथा 27 मई से 16 जून 1975 तक विदुषी साध्वी श्री निर्मलाश्रीजी की निश्रा में कन्या शिविर श्री पुखराज जी सिंघी की अध्यक्षता में लगा। खीमेल में 12 फीट ऊँचा कीर्ति-स्तम्भ निर्मित हुआ। जोधपुर में 1 महावीर बालिका उच्च विद्यालय स्थापित करने का निश्चय हुआ और भैरू बाग में 26 मई से 16 जून 1974 तक पूज्य साध्वी श्री निर्मलाश्रीजी के सान्निध्य में कन्या शिविर का कुमारी पन्ना बहन पी.शाह द्वारा संचालन हुआ। केसरिया जी तीर्थ ऋषभदेव में 'भगवान महावीर कीर्ति स्तम्भ', सवाई माधोपुर में 'श्री महावीर धर्म प्रचार संघ' और सुमेरपुर में 'लोर्ड महावीर होस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर' 3 करोड़ लागत का निर्माण होने के निर्णय लिये गये। लाडनूं में 'जैन विश्व भारती' का उद्घाटन तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

द्वारा दिनांक 24- -75 को सम्पन्न हुआ। उदयपुर में 3400 जैन कुटुम्बों ने मिलकर 8 दिन तक महोत्सव बडे ठाट-बाट से मनाया था।

विदेश में निर्वाण महोत्सव

यूनेस्को ने सन् 1974-75 निर्वाण वर्ष "अहिंसा वर्ष" घोषित किया और अमेरिका के 17 राज्यों में जैन धर्म सम्बन्धी अंग्रेजी साहित्य वितीर्ण हुआ। बेंगकांग में 3 नवम्बर, 1975 को राष्ट्रीय मांस-रहित दिन घोषित हुआ। न्यूयोर्क मोम्बासा, लन्दन में विविध कार्यक्रम उपासना, आराधनादि हुए, स्वीट्जरलेण्ड, फीजी, नेपाल, चीन, ईटाली में भी महोत्सव मनाया गया। केनेड़ा के टोरेन्टो में जिन मन्दिर की रचना होकर भगवान महावीर की प्रतिमा स्थापित हुई। अमेरिका के 10 राज्यों में महावीर केन्द्र की स्थापना हुई, न्यूयार्क में श्री चित्र-भानुजी ने 'जैन मेडिटेशन इण्टरनेशनल सेण्टर' कायम कर वहाँ जैन धर्म का प्रचार किया और कर रहे हैं और सेण्टर के अमरीकी सदस्यों को भारत के जैन तीर्थ यात्रा कराते रहते हैं। जैन मन्दिर केन्द्र की भी न्यूयार्क में स्थापना हुई है। श्री सुशील मुनि जी ने 17 सभ्यों के मिशन के साथ 17 जून, 1975 से दो मास तक, जैन धर्म के प्रचार के लिये अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, थाईलेण्ड, होंगकोंग वगैराह देशों में परिभ्रमण कर निर्वाण महोत्सव मनाया। मुख्य देशों में उनके प्रवचन भी हुए। उनके साथ यति श्री जिनवन्द्रसूरिजी बीकानेर के भी थे। लन्दन विश्व-विद्यालय में डॉ. सत्यरंजन बनर्जी ने 'जैन धर्म की आज के मानव के लिये उपयोगिता' और डा. एम. एम. शर्मा ने भगवान महावीर के राज-सुख त्याग कर तप—तपस्या के मार्ग पर सच्चा सुख प्राप्त करने के विषय पर चर्चा की। जर्मनी के बर्लिन यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर ब्रून ने जैन धर्म विषया-न्तर्गत "जैन धर्म मोक्ष-सिद्धान्त" पर व्याख्यान दिया। अपने व्याख्यान में 'आवश्यक सूत्र' 'प्रतिक्रमण', 24 तीर्थंकरों की भक्ति आदि की जर्मन भाषा में चर्चा की तथा शत्रुंजय और 'श्रमण-बेल-गोला' के स्लाइड्स भी व्याख्यान के बाद प्रदर्शित किये। स्वीट्जरलेण्ड के ज्यूरिच शहर में भव्य जैन धर्म कला प्रदर्शन का आयोजन हुआ। काबुल में श्रीमती एन. पी. जैन का मननीय

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

प्रवचन हुआ और काबुल राजदूतालय के अधिकारी श्री ऐ. के. जैन ने 'जैन दर्शन की आज के युग में सार्थकता' विषय पर व्याख्यान दिया। इस सभा में काबुल के भारतीय बड़ी संख्या में उपस्थित रहे थे। नेपाल के काठमाण्डु में, जैन धर्म के चारों संप्रदाय की संयुक्त जैन परिषद् की स्थापना हुई और चारों सम्प्रदाय ने मिलकर पर्युषण पर्व की आराधना की। 13 नवम्बर, 1974 निर्वाण दिवस के दिन आध्यात्मिक कार्यक्रम से निर्वाण महोत्सव का शुभारम्भ हुआ। भारतीय सहयोग मिशन सर्वे ट्रेनिंग स्कूल के प्राध्यापक श्री बी. आर. जैन ने जैन दर्शन के मुख्य सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या करते हुए जीवन में उतारने का अनुरोध किया और भगवान महावीर के जन्म कल्याणक प्रसंग पर मुनि श्री पूनमचन्दजी आदि के सान्निध्य में सभा हुई जिसका उद्घाटन, नेपाल के प्रधानमंत्री श्री नगेन्द्रप्रसाद रिजालजी ने किया। इस सभा में जैन बौद्ध भिक्षु, सनातन धर्म के धर्म गुरु वरिष्ठ नेता और स्थानीय नेपाली जनता बड़ी संख्या में उपस्थित थी।[1]

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू

अन्त में माउण्ट आबू पर जो निर्वाण समिति की रचना हुई और जिसके द्वारा यह पुस्तक प्रकाशित हुई, उसका परिचय और निर्वाण वर्ष में सम्पादित कार्य का संक्षिप्त विवरण देना भी प्रासंगिक होगा। इस समिति की स्थापना दिनांक 29-12-74 को हुई। सर्वानुमति से श्री के. एस. ालुंडिया तत्कालीन उपनिदेशक, पर्यटन विभाग, आबू, अध्यक्ष, श्री रामचन्द्र जैन उपाध्यक्ष और श्री जोधसिंह मेहता मुख्य मैनेजर श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर देलवाड़ा, मंत्री नियुक्त हुए।

समिति द्वारा कई कार्य विविध प्रकार के सम्पादित हुए जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

---

1. भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव—माहिती विशेषांक (गुजराती) प्रकाशक जैन साप्ताहिक वडवा, पादर देवली रोड, भावनगर, मूल्य रु 15 : 00, सन् 1976।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ज्ञान प्रसार की दिशा में, राजकीय उच्चतर माध्यमिक पाठशाला आबू के विशाल भवन में डा. प्रेमसुमन, प्रवक्ता प्राकृत संस्कृत विभाग, उदयपुर विश्वविद्यालय का दिनांक 17-2-75 के दिन, 'आधुनिक परिवेश में भगवान् महावीर' पर सरल, स्पष्ट और सुसंस्कृत हिन्दी भाषा में सार्वजनिक भाषण हुआ। दिनांक 24-3-75 को 'जीवन और धर्म' पर मुनिराज श्री भद्रगुप्त विजयजी का प्रवचन देलवाड़ा जैन मन्दिर श्री वल्लभ लाइब्रेरी में हुआ उसका लाभ समिति के सदस्यों ने उठाया और इसी प्रकार भगवान् महावीर जन्म कल्याणक दिवस चैत्र सुदी 13 तदनुसार 24-4-75 को राजपूताना क्लब माउण्ट आबू में मुनिराज श्री जिनप्रभ विजयजी का सार्वजनिक भाषण हुआ जो कि भगवान् महावीर जन्म कल्याण महोत्सव समिति आबू और नवपद आराधक समिति, शिवगंज ने 'भगवान् महावीर स्वामी और उनके सिद्धान्त' पर आयोजित किया उसका लाभ भी समिति के सदस्यों ने लिया। इस सार्वजनिक सभा में तत्कालीन उपजिलाधीश श्री श्यामसुन्दर श्रीवास्तव, भूतपूर्व सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस श्री उम्मेदसिंहजी, राजकीय अधिकारी एवं आबू के प्रतिष्ठित नागरिक श्रीमती कूर्मी मेहरबानजी और श्री कान्तीलाल उपाध्याय सेक्रेट्री लायन्स क्लब सहित बड़ी संख्या में जनता उपस्थित थी। दिनांक 24-4-75 को विश्व विख्यात देलवाड़ा जैन मन्दिर से प्रसिद्ध नक्खी झील तक, विशाल और भव्य वरघोड़ा (शोभा यात्रा) निकला जिसमें सर्व सम्प्रदाय विशेषकर जैन संघ सम्मिलित था। आबू में इतना महान् वरघोड़ा पहली बार यहाँ की जनता ने देखा और बड़ा हर्षोल्लास अनुभव किया।

समिति ने भगवान् महावीर आधुनिक युग पर निबन्ध प्रतियोगिता भी आयोजित की और उसमें प्रथम पुरस्कार निर्भयकुमार गंगवाल, कुचामन सिटी को 25 रुपया, द्वितीय पुरस्कार 15 रुपया का श्री प्रकाशचन्द्र जैना गुडगांव छावनी हरियाणा को और तृतीय पुरस्कार सुश्री सन्तोषकुमारी सेठ फतहपुर सिटी को 10 रुपये का भेंट किया गया। मंत्री श्री जोधसिंह मेहता ने 'राजस्थान के प्रमुख (श्वेताम्बर) जैन मन्दिर' और 'विश्व विख्यात देलवाड़ा जैन मन्दिर' पर लेख लिखे जो क्रमशः जिनवाणी पत्रिका जयपुर और जैन संस्कृति और राजस्थान विशेषांक' और भगवान् महावीर स्मृति ग्रन्थ सन्मति ज्ञान प्रसारक मण्डल शोलापुर में प्रकाशित हो चुके हैं।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

समिति द्वारा नक्खी झील पर नगरपालिका आबू द्वारा प्रदत्त चट्टान भूमि पर एक सुन्दर कलात्मक भगवान् महावीर स्तंभ का रुपया 17001) में शिल्पी श्री काशीराम बी. दवे से निर्माण कराया गया जिसका उद्घाटन तत्कालीन जिलाधीश श्री तुलसीराम अग्रवाल ने दिनांक 12-11-75 ई. को विधिवत् किया। इस संगमरमर के स्तंभ के एक ओर जैन प्रतीक और तीन ओर मूल प्राकृत, हिन्दी गुजराती और अंग्रेजी में भगवान् महावीर के धर्मोपदेशक अङ्कित कराये गये। पर्यटन स्थल होने से हजारों यात्री इस प्रमुख स्थान पर आकर भगवान् महावीर की वाणी को पढ़ते हैं और लाभ उठाते हैं, समिति ने भगवान् महावीर स्तम्भ को, सुरक्षा और संरक्षण निमित्त नगरपालिका माउण्ट आबू को, उद्घाटन के अवसर पर अर्पण कर दिया।

समिति ने जीव रक्षा, पशु शिकार और वन रक्षा, हरे वृक्ष कटाई के विरोध में आबू पर साइन बोर्ड लगाये और स्थानीय ब्लाइण्ड स्कूल के अंध जनों को गर्म स्वेटर तथा जनरल हास्पिटल के रोगियों को ऊनी कम्बलें भी इस वर्ष में वितरण की गई।

समिति ने गत महावीर जन्म कल्याणक दिवस महावीर जयन्ती चैत्र शुक्ला 13 वि. सं. 2034 दिनांक 2-4-1977 ई. को नगरपालिका माउण्ट आबू के पुस्तकालय में माउण्ट आबू की समाज सेविका श्रीमती कूर्मी महरबानजी के वरद् हस्तों से 'भगवान् महावीर कक्ष' का उद्घाटन कराया। इस कक्ष हेतु, शान्ति सदन ट्रस्ट की ओर से 5000 रुपये एवं समिति की 238)25 रुपये की सहायता मिली जिससे पुस्तकें, अलमारियां आदि खरीदी गई। भगवान् महावीर के जीवन, उपदेश और सिद्धान्त पर, हिन्दी, अंग्रेजी में आधुनिक ढङ्ग की पुस्तकों का कुछ साहित्य उपलब्ध कराया गया है।

समिति को भगवान् महावीर स्तंभ निर्माण कराने और विविध प्रवृतियों के संचालन में जैन यात्रियों, प्रमुख जैन भाईयों, प्रमुख जैन संस्थाओं, जयपुर के धनी मानी व्यक्तियों और श्री शान्तिदेव सेवा समिति बम्बई से विशिष्ट धन राशि भेंट में मिली है जिसके लिये समिति के सदस्य उनका आभार मानते हैं। यदि विशेष सहयोग नहीं मिलता तो समिति माउण्ट आबू पर भगवान् महावीर के 2500 वां निर्वाण महोत्सव के शुभ कार्य संपादन करने में असफल रहती।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट–1

संदर्भ ग्रन्थ सूची

क्र.सं.	नाम ग्रन्थ	लेखक	प्रकाशक	वि. संवत् या सन्
1	2	3	4	5
1.	हिन्दी जैन कल्प सूत्र	उपाध्याय श्री विनय विजयजी की सुबोधिका टीका का हिन्दी भाषान्तर	श्री आत्मानंद जैन महासभा पंजाब, जालंधर शहर	2005
2.	भारतीय जैन श्रमण संस्कृति अने लेखन कला (गुजराती)	मुनि श्री पुण्यविजयजी	साराभाई मणिलाल नवाब अहमदाबाद	
3.	श्री तपागच्छ पट्टावली स्वोपज्ञ वृत्ति सहित (गुजराती)	महोपाध्याय श्री धर्मदास गणि वि. सं. 1648 सम्पादक पंन्यास श्री कल्याणविजयजी	श्री विजयनीतिसूरीश्वरजी जैन लाईब्रेरी, अहमदाबाद	1996
4.	त्रिषष्ठि-शलाका-पुरुष चरित्र आवृति श्रीजी (गुजराती भाषान्तर)	कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेम-चन्द्राचार्य विरचित वि. सं. 1230	श्री जैन धर्म प्रसारक सभा भावनगर	1979

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

5.	जैन परम्परा नो इतिहास भाग 1-2-3 (गुजराती)	मुनि श्री दर्शन, ज्ञान न्याय विजयजी श्री त्रिपुटी महाराज	श्री चरित्र स्मारक ग्रन्थमाला नागजी भूदरजी पोल, मांडवी की पोल, अहमदाबाद	भाग 1 वि. सं. 2009 (ई.सं. 1952) भाग 3जा वि. सं. 2021 (ई. सं, 1964)
6,	श्री प्रभावक चरित्र (गुजराती भाषान्तर)	श्री प्रभाचंद्र कृत वि. सं. 1334, संपादक मुनि जिनविजयजी	श्री जैन आत्मानंद सभा, भावनगर	1987
7.	श्री तपागच्छ श्रमण वंश वृक्ष (गुजराती बीजो आवृत्ति)	जयन्तीलाल छोटालाल शाह	जयन्तीलाल छोटालाल शाह, झवेरीवाड सात भाई की हवेली, अहमदाबाद	
8.	जैन साहित्य और इतिहास (हिन्दी)	पं. नाथूराम प्रेमी	संशोधित साहित्य माला, ठाकुर द्वार, बम्बई 2	सन् 1956
9.	भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास पहला दूसरा जिल्द (हिन्दी)	इतिहास प्रेमी मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी		वि. सं. 2000
10.	जैन धर्म का इतिहास (हिन्दी)	मुनि श्री सुशीलकुमारजी	सम्यग् ज्ञान मंदिर 87, धर्मतल्ला स्ट्रीट कलकत्ता	वि. सं. 2016
11.	तेरा पंथ का इतिहास खण्ड 1 (हिन्दी)	मुनि श्री बुद्धमलजी	साहित्य प्रकाशन समिति कलकत्ता	वि. सं. 2001

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

12.	जैन धर्म नो प्राचीन इतिहास भाग बीजो (गुजराती)	श्रावक हीरालाल वि. हंसराज	श्रावक हीरालाल वी. हंसराज जामनगर, काठियावाड़	वि सं . 2001
13.	राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा (हिन्दी)	अगरचन्द नाहटा	ओंप्रकाश राधाकृष्ण प्रकाशन 2 अन्सारी रोड़, दरियागंज, दिल्ली	सन् 1967
14.	जैन दर्शन मां काल नुं स्वरूप (गुजराती)	आचार्य श्री विजय सुशीलसूरिजी	बगडिया चिमनलाल हरिचंद प्रमुख, श्री ज्ञानोपासक समिति बोटाद, (सौराष्ट्र-गुजरात)	वि. सं. 2028
15.	भगवान् महावीर जीवन और उपदेश	साहित्य समिति	भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव महा समिति उदयपुर	सन् 1974
16.	भगवान् महावीर स्मृति ग्रन्थ	संपादक मण्डल		सन् 1976
17.	भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव माहिती विशेषांक (गुजराती)	सम्पादक मण्डल	जैन गुजराती साप्ताहिक वडवा, पादर देवकी रोड, भावनगर	सन् 1976
18.	Jainism in Rajasthan.	Dr. K. C. Jain	Gulab chand Hira	1963 A. D.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

	(English)		chand Doshi Jain Samskrti Samrak Shak Sang, Sholapur
19.	A Monk and A Monarch (Enlish)	Origional in Gujrati by Muniraj Vidhavijayaji Adapted by Dolarrair Maukad	Deep Chand Barethia, Secy. Shri Vijaydharmasuri Jain Books Series Chhota Sarafa, Ujjain.
20.	History of India	Vincent Smith	
21.	Jain Teachers of India	Vincent Smith	

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू के सदस्यों की नामावली

1. श्री कुशालसिंहजी गलुण्डिया, भूतपूर्व उप-निदेशक, पर्यटन विभाग राजस्थान माउण्ट आबू, 29-12-1974 से 15-12-1975 — अध्यक्ष
2. श्री तेजसिंहजी डांगी, भूतपूर्व प्राध्यापक, शिक्षण प्रशिक्षण केन्द्र देलवाड़ा माउण्ट आबू 16-12-1975 से
3. श्री रामचन्द्रजी जैन कान्ट्रेक्टर (दिवंगत) शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू 29-12-1974 से 4-8-76 तक — उपाध्यक्ष
4. श्री आत्मारामजी जैन कान्ट्रेक्टर, शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू 21-11-1976 से
5. श्री जोधसिंह मेहता, चीफ मैनेजर, देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर माउण्ट आबू — मन्त्री
6. श्री धर्मीलाल जैन, मैनेजर, दिगम्बर जैन मन्दिर देलवाड़ा, माउण्ट आबू — सह-मंत्री
7. श्री बाबूलालजी शाह, मुनीम, देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर, माउण्ट आबू — कोषाध्यक्ष
8. श्री पारसमलजी चौधरी, भूत-पूर्व अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, माउण्ट आबू — सांस्कृतिक मंत्री
9. श्री देवाजी महाराज, शान्ति सदन, माउण्ट आबू — सदस्य कार्यकारिणी समिति
10. श्री जसराजजी गांधी, रीडर, उपखण्ड अधिकारी, कार्यालय, माउण्ट आबू — ,,
11. श्री कँवरसेनजी जैन, माउण्ट आबू — ,,
12. श्री साकरचन्दजी शाह, देलवाड़ा, माउण्ट आबू — ,,
13. श्री बाबूलालजी दोसी, सर्वेयर, सर्वे ओफ इण्डिया, माउण्ट आबू — ,,
14. श्री शंकरलालजी बागरेचा, राजस्थान ज्वेलर्स, माउण्ट आबू — ,,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

15	श्री मनोहरलालजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, शिक्षण प्रशिक्षण केन्द्र, देलवाड़ा माउण्ट आबू	,,
16.	श्री प्रेमचन्दजी जैन, शिवाजी मार्ग, माउण्ट आबू	सदस्य
17.	श्री जयसिंहजी जैन, कान्ट्रेक्टर, पालनपुर	,,
18.	श्री आर. के. जैन, भूत-पूर्व डॉक्टर, मिलिट्री हास्पिटल, माउण्ट आबू	,,
19.	श्री वीरेन्द्रकुमारजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, शिक्षण प्रशिक्षण केन्द्र, माउण्ट आबू	,,
20.	श्री चम्पालालजी सिंघवी, भूत-पूर्व अध्यापक, उच्च माध्यमिक विद्यालय, माउण्ट आबू	,,
21.	श्री छगनलालजी गेमावत, प्राध्यापक, भावन कॉलेज, अहमदाबाद	,,
22.	श्री भरतभाई मोहनलाल कोठारी, एडवोकेट, अहमदाबाद	,,
23.	श्री शान्तिलालजी मोदी, शारीरिक, शिक्षक, उच्च माध्यमिक विद्यालय, माउण्ट आबू	
24.	श्री नथमलजी कांगटाणी, वरिष्ठ लिपिक, राजकीय कन्या विद्यालय, माउण्ट आबू	,,
25	श्रीमती स्नेहलता तिवारी, देलवाड़ा, माउण्ट आबू	,,
26.	श्रीमती कान्ता बहन जैन, देलवाड़ा, माउण्ट आबू	,,
27.	श्री गोपालसिंहजी जैन, नक्खी झील, माउण्ट आबू	,,
28.	श्री घनश्यामजी पामेचा, नक्खी झील, माउण्ट आबू	,,

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट 3

भगवान् महावीर स्तम्भ

भगवान् महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव समिति माउण्ट आबू ने, संगमरमर के श्वेत पाषाण का एक सुन्दर कलाकृत स्तम्भ 10 फीट ऊँचा और 4 फीट चौड़ा चतुष्कोण आकार में राजस्थान के प्रसिद्ध पर्यटन केन्द्र आबू पर्वत पर रुपया 17001 का सद्व्यय कर निर्माण करवाया है जो नक्खी झील पर, गांधी गार्डन के प्रमुख स्थान पर स्थित है। इसका उद्घाटन वीर सं. 2502 (वि. सं. 2032--ई. सं. 1975) को तत्कालीन जिलाधीश सिरोही श्री तुलसीरामजी अग्रवाल के वरद् हस्त से सम्पन्न हुआ तथा संरक्षणार्थ और सुरक्षार्थ, भगवान् महावीर स्तम्भ को नगर पालिका माउण्ट आबू को अर्पण किया गया। इस स्तम्भ का निर्माणकर्त्ता सोमपुरीय शिल्पी श्री काशीराम बी. दवे, भारतीय शिल्प कला केन्द्र पिंडवाड़ा है।

भगवान् महावीर स्तंभ का डिजाइन (तर्ज) चारों दिशाओं में एक समान है। सबसे उन्नत भाग में सुन्दर कलात्मक शिखर है जिसके चारों तरफ मध्य भाग में निम्न स्तर पर, सिंह की आकृति खुदी हुई है और उसके नीचे एक छोटी आकृति धर्म चक्र की बनी हुई है और गोलाकार धर्म चक्र में सूक्ष्म अक्षरों में अहिंसा आलेखित है। शिखर के नीचे, जैन धर्म का मौलिक सिद्धांत तत्वार्थसूत्र का प्रथम श्लोक—"सम्यग् दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः" संस्कृत हिन्दी, अंग्रेजी और गुजराती चारों भाषाओं में अंकित है। तदनन्तर, मध्य भाग में चारों बाजु, 4फीट 9इन्च लम्बे और 2फीट 3इन्च चौड़े पट्ट पर जिसके चारों ओर कमल की बेल का बोर्डर बना हुआ है, जैन धर्म के उपदेश-भगवान् महावीर की वाणी-प्राकृत,हिन्दी,गुजराती में लिखी हुई है। अंग्रेजी में भगवान् महावीर के उपदेश स्थानाभाव के कारण, दक्षिण और उत्तर के दो छोटे पट्ट 3 फीट 10 इन्च और 9 इन्च पर बाद में खुदवाये गये हैं जो सबसे नीचे के भाग में है। जैन धर्म के उपदेश के नीचे,प्रशस्ति चारों दिशाओं में और

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

चारों भाषाओं के उत्खनन की हुई है। प्रशस्ति पट्ट के ऊपर चारों भाषाओं में भगवान् महावीर स्तम्भ आलेखित है और इसके नीचे पूर्व में, आबू के वन के खजूरों का समूह दोनों बाजु और बीच में, गाय और शेर को जल-पात्र में एक साथ पानी पीते हुए प्रदर्शित किया गया है और पश्चिम में इसी तरह अष्ट मंगलिक दिखलाया गया है। दक्षिण तथा उत्तर के समानान्तर पट्ट पर अंग्रेजी में भगवान् महावीर के उपदेश अंकित हैं जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है।

स्तम्भ की रक्षा के निमित्त चारों ओर, एक फीट की दूरी पर लोहे का रेलिंग चारों बाजु लगा दिया गया है। रेलिंग के मध्य भाग में श्री महावीर स्तम्भ आबू पर्वत चारों तरफ चारों भाषाओं में अक्षर सुन्दर तर्ज से लगे हुए हैं।

प्रत्येक साइड का विस्तृत वर्णन इस प्रकार है—

भगवान् महावीर स्तम्भ का विस्तृत वर्णन

भगवान् महावीर स्तम्भ का प्रमुख भाग, पूर्व दिशा में है। इस भाग पर, शिखर से लेकर भूमितल तक क्रमशः निम्न अक्षर और आकृतियां खुदी हुई हैं।

1. शिखर के बाह्य भाग की ओर सिंह का आकार और उसके नीचे 'धर्म-चक्र' के वृत्त में 'अहिंसा' शब्द अंकित है।
2. तत्वार्थ सूत्र का प्रथम श्लोक का अंग्रेजी भाषान्तर इस प्रकार आलेखित है—

   卐 'Right Faith, Right Knowledge And Right Conduct Are The Way To Moksha—The Final Liberation' 卐

3. जैन धर्मावलम्बियों के सर्व संप्रदायों द्वारा स्वीकृत जैन प्रतीक निम्न आकार का खुदा हुआ है जिसका महत्व इस प्रकार है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन प्रतीक, त्रिलोक का आकार-पुरुषाकार में दिखलाया गया है जिसका जैन शासन में महत्वपूर्ण स्थान है और यह सर्वथा मंगलकारी है। सबसे प्रथम तीन बिन्दुएँ, त्रिरत्न-सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र की सूचक है और उसके ऊपर अर्द्ध चन्द्र, सिद्ध शिला मोक्ष को लक्षित करता है। स्वास्तिक के नीचे जो हाथ अंकित है वह अभयदान का बोध कराता है एवं जो हाथ के मध्य में चक्र है, वह अहिंसा का धर्म चक्र है और चक्र के बीच में अहिंसा लिखा हुआ है। प्रतीक शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की दिशा में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है। त्रिलोक आकार में प्रतीक का स्वरूप, यह बोध कराता है कि चतुर्गति-मनुष्य, देव, तीर्यञ्च और नरक योनि-में भ्रमण करती हुई आत्मा, अहिंसा धर्म को अपनाकर के, सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र द्वारा मोक्ष पद प्राप्त कर सकता है।

प्रतीक के नीचे 'परस्परोपग्रहो जीवामां' का अर्थ है कि जीवों का परस्पर उपकार है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

4. अंग्रेजी में प्रशस्ति स्तम्भ की इस प्रकार से लिखित है—

Bhagwan Mahavir 2500Th Nirwan Mahotsava Samiti Mt. Abu, got constructed 'Bhagwan Mahavir Stambh' by the Architect Kashi Ram B. Dave, at the cost of Rs. 17001/- on Nakhi Lake, in the year Vir Samvat 2502 (V. S. 2302) It was dedicated to Municipal Board Mount Abu, After Its Inauguration By Shri Tulsi Ram Collector Sirohi, on 12th Nov. 1975 A. D. Kartik Sudi 9.

5. भगवान् महावीर स्तम्भ का अंग्रेजी भाषान्तर के निम्न शब्द दर्ज हैं—
'Bhagwan Mahavir Pillar'

6. अन्तिम, आबू की वन विशेषताओं के रूप में खजूरों का समूह और उनके मध्य में वन प्राणी-सिंह और गाय--को एक जल-भाजन से जल पीते हुए प्रदर्शित किया गया हैं जो दृश्य वैर-विरोध के शमन का सूचक है।

भगवान् महावीर स्तम्भ के पश्चिम भाग पर, क्रमश: निम्नांकित अक्षर और आकार बने हुए हैं—

1. शिखर के बाह्य भाग की ओर सिंह का आकार और उसके नीचे 'धर्म-चक्र के वृत्त में अहिंसा शब्द अंकित है।

2. तत्वार्थ सूत्र का पहला श्लोक मूल संस्कृत भाषा में निम्न शब्दों में लिखित है।

'सम्यग्-दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष मार्ग:।'

3. जैन धर्मोपदेश मूल पाठ प्राकृत भाषा में निम्नांकित है—

जैन धर्मोपदेश (मूल-पाठ)

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवावि तं नमंसंति जस्स धम्मेसया मणो॥
—दशवैकालिक 1।1

चत्तारि धम्मदारो खंती, मुत्ती, अज्जेव, मद्दवे।
स्थानांग 4।4

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

विणय मूले धम्मे पन्नत्ते ।

—ज्ञात धर्म कथा 1।5

सव्वे पाणा पिआउआ, सुहसाया दुक्ख पडिकूला,
अप्पियवहा पिय जीविणो, जीविउ कामा
सव्वेसिं जीवियं पियं नाइवाएज्ज कंचणं ।

—आचारांग 1।2।3

आयंकदंसी न करेइ पावं ।

—आचारांग 1।3।2

मुच्छा परिग्गहो वुत्तो ।

—दश वैकालिक 6।21

बहुं लद्धुं न निहे,
परिग्गहाओ अप्पाणं अवसविकज्जा ।

—आचारांग 1।2।5

भासियव्वं हियं सच्चं ।

—उत्तराध्ययन 19।20

आदिन्नमने सुयणो गहेज्जा ।

—सूत्रकृतांग 10।2

नो तुच्छए नोय विकत्थइज्जा ।

—सूत्रकृतांग 1।14।21

चरितं सम भावो

—पंचास्तिकाय 107

सच्चमि घिइं कुव्विहा ।

—आचारांग 1।2।3

तवेसु वा उत्तम बंभचेरं ।

—सूत्रकृतांग 1।6।23

कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं ।

— उत्तराध्ययन 13।23

दाणाण सेट्ठं अभयप्पयाणं ।

—सूत्रकृतांग 1।6।13

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ग्रणुचिंतिय वियागरे ।

—सूत्रकृतांग 1।9।25

—श्री महावीर वाणी

4. प्रशस्ति संस्कृत भाषा में नीचे लिखे अनुसार है—
"भगवान् महावीर द्विसहस्र पंचशततम निर्वाण महोत्सव समितिः अर्बु दाचले नक्की सरोवरे वीर संवत् 2502 तमे (विक्रम संवत् 2032 तमे) 17001 रुप्यकानां सद्व्ययः कृत्वा भगवान् महावीर स्तम्भस्य निर्माणं शिल्पिना काशीराम बी. दवे महोदयेन कारयित्वा पुनश्च अर्बु दाचल नगरपालिकां संरक्षणार्थमर्पयत् यस्य उद्घाटनं 12 नवम्बर दिवसे 1975 खिस्ताब्दितमे कार्तिक शुक्ल नवम्यां तिथौ श्रीमत् तुलसीराम जी, सिरोही जिलाधीशस्य वरद् हस्तेन सम्पन्नोऽभवत् ॥ शुभमस्तु ॥"

5. संस्कृत में 'भगवान् महावीर स्तम्भः' लिखा हुग्रा है ।

6. जैन ग्रष्ट मंगलिक के ग्राकार अंकित है जिसके नाम हैं—1. स्वास्तिक 2. श्रीवत्स 3. नन्द्यावर्त 4. वर्धमानक 5. महासन 6. कलश 7. मीन-युगल 8 दर्पण ।

3. उत्तराभिमुख भाग पर, क्रमशः नीचे लिखे ग्रनुसार, ग्राकार ग्रौर ग्रक्षर ग्रंकित है—

   1. सबसे ऊपर, शिखर के बाहरी तरफ सिंह का ग्राकार है ग्रौर उसके नीचे धर्म-चक्र के वृत में ग्रहिंसा शब्द ग्रालेखित है ।
   2. तत्वार्थसूत्र का पहला श्लोक का हिन्दी भाषान्तर इस प्रकार खुदा हुग्रा है—'सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान ग्रौर सम्यग् चारित्र यही मोक्ष मार्ग है ।'
   3. जैन धर्म के उपदेश हिन्दी भाषान्तर में निम्न लिखे हुए हैं—

जैन धर्म के उपदेश

हिन्दी भाषान्तर

1. धर्म सबसे उत्कृष्ट मंगल है, धर्म, ग्रहिंसा, संयम ग्रौर तप, जिसका मन सदा धर्म में रत रहता है, उसे देवता भी नमस्कार करते हैं ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

2 क्षमा, सन्तोष, सरलता और नम्रता ये चार धर्म के द्वार हैं।

3 धर्म का मूल विनय आचार-अनुशासन है।

4. सब प्राणियों को अपनी जिन्दगी प्यारी है। सुख सबको अच्छा लगता है और दुःख बुरा। वध सबको अप्रिय है और जीवन प्रिय। सब प्राणी जीना चाहते हैं, कुछ भी हो सबको जीवन प्रिय है। अतः किसी भी प्राणी की हिंसा न करो।

5. जो संसार के दुःखों को जानता है, वह ज्ञानी कभी पाप नहीं करता।

6. मूर्च्छा-आशक्ति को ही वस्तुतः परिग्रह कहा है। अधिक मिलने पर भी संग्रह नहीं करे, परिग्रह वृत्ति से अपने को दूर रखे।

7. सदा हितकारी वचन बोलना चाहिये।

8. बिना दी हुई किसी भी चीज को नहीं लेना चाहिये।

9. बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिये कि वह प्राणी से न किसी को तुच्छ बताये और न झूठी प्रशंसा करे।

10. समभाव ही चरित्र है।

11. सदा सत्य में दृढ़ रहो।

11. तपों में श्रेष्ठ तप ब्रह्मचर्य है।

13. कर्मकर्त्ता का ही अनुगमन करता है।

14 दानों में अभयदान श्रेष्ठ है।

15. जो कुछ बोले पहले विचार कर बोले।

—श्री महावीर वाणी

4. प्रशस्ति हिन्दी में निम्नांकित शब्दों में दर्ज है—

"भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति आबू पर्वत ने भगवान् महावीर स्तम्भ नक्खी झील पर वीर संवत् 2502 वि. सं. 2032 में रु. 17001 सद्व्यय कर शिल्पी काशीराम बी. दवे से निर्माण करावाया और पुनः नगरपालिका आबू पर्वत को संरक्षणार्थ अर्पण किया एवं उद्घाटन 12-11-'975 ई. को श्री तुलसीरामजी जिलाधीश सिरोही के वरद् हस्त से सम्पन्न हुआ। काती सुदी 9 शुभमस्तु।"

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

5. हिन्दी में 'भगवान् महावीर स्तम्भ' के अक्षर खुदे हुए हैं।
6. पूर्व और पश्चिम के निम्नतम भाग की पट्टी जो कि 3 फीट 10 इंच लम्बी और 9 इंच चौड़ी है, वैसी ही नाप की पट्टी पर भगवान् महावीर के उपदेश श्री महावीर की वाणी का अंग्रेजी भाषान्तर है। अंग्रेजी भाषान्तर के उपदेश दो भागों में स्थानाभाव के कारण विभक्त किये गये हैं। प्रारम्भिक भाग, दक्षिण की तरफ है और इस उत्तरीय भाग की ओर 7 से 15 तक उपदेश अंकित हैं जो इस प्रकार हैं—

TEACHING OF LORD MAHAVIRA

7. Always speak benevolent words.
8. Don't take anything unless given by its owner.
9. A wise man should neither humiliate anyone through his words nor he should praise falsely.
10. Equanimity of soul is real conduct.
11. Always remain stedfast to truth.
12. Sexual abstinence is the best of all penances.
13. Karma (action) ever fallows its doer.
14. To give protection from all fears is the best of all charity.
15. Think well before whatever you speak.

4. अन्तिम दक्षिण भाग पर क्रमशः आकार और अन्तर गुजराती भाषा में निम्नांकित हैं—

   1 सर्व प्रथम शिखर के बाहरी (दिखाई) देते हुए भाग पर सिंह (बाघ) और उसके नीचे छोटे से धर्म-चक्र में सूक्ष्म अहिंसा के अक्षर बने हुए हैं।

   2. तत्त्वार्थ सूत्र का वाक्य इस प्रकार अङ्कित है:—
   सम्यग् दर्शन, सम्यग् ज्ञान अने सम्यग् चारित्र्य मर्गो मोक्ष मार्ग छे

   3. जैन धर्म ना उपदेश, बड़े पट्ट पर आलेखित है:—

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन धर्म ना उपदेश

1. सोथी उत्कृष्ट मंगल धर्म छै।
2. धर्म अेटले अहिंसा, संयम अने तप, जेमनु मन सदा धर्ममय होय छै तेमने देवताओं पण नमन करे छै ।

   क्षमा, सन्तोष, सरलता अने नम्रता अे चार धर्म द्वार कहवाये छै ।
3. धर्म नु मूण विनय अथवा आचार अेटले के नियम छै ।
4. सर्व प्राणीयों ने पोत पोतानी जींदगी प्यारी छै, सुख नी इच्छा सो कोई करे छै अने दुःख थी दूर भागे छै। वध कोई ने गमतो नथी, अने जीवन सो ने प्रिय लागे छै । जीववानी इच्छा सो कोई राखे छै ।

   गमे तेम पण सर्व ने जीवन प्रियकर छै ।

   अेटले कोई पण प्राणीनी हिंसा करसो नहीं ।
5. जे संसार ना दुःखो ने जाणे छै ते कदी पापाचरण करताज नथी ।
6. आशक्ति माणस ने साचेसाच परिग्रह कहयों छै ।
7. गमे तेटलु वधारे भले तो पण जे परिग्रह न करै अने अेवी परिग्रह वृत्ति थी हमेशा दूर रहेवु ।
8. सदा हितकारी वचन बोलवा जोइये ।
9. कोई नी कोई पण चीज वस्तु आपण ने आपवामा न आवे त्यां सुधी कदीये लेवी जोईये नहीं ।
10. बुद्धिशाली माणसे मन वचन थी न तो कोई ने उतारी पाडवो जोईये न कोईनी मिथ्या प्रशंसा करवी जोईये ।
11. समभाव नेज चरित्रय कहयु छे ।
12. सदा सत्य मां सुदृढ़ रहवु जोईये ।
13. सघली तपश्चर्या मां ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ तप छे ।
14. कर्म सदा कर्म करनार नी पाछल पाछल ज चालतु रहे छे ।
15. सघलां दान मां अभयदान मोटु छे ।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

16. जे कोई बोलो ते बोलता पहला विचार करीनेज बोलो।

—श्री महावीर वाणी

4. प्रशस्ति के अक्षर इस प्रकार खुदे हुए हैं:—

"भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति माउण्ट आबू अे भगवान् महावीर स्तंभ नक्खी तलाव ऊपर वीर सं 2502 (वि. सं. 2032) मां रु. 17001 सद् उपयोग करी शिल्पी काशीराम बी. दवे पासे तैयार करावी नगर पालिका आबु पर्वत ने संरक्षणार्थे अर्पण कीनो अने उद्घाटन तारीख 12-11 1975 ई. श्री तुलसीरामजी जिलाधीश सिरोही नां वरद् हस्ते तिथी कार्तिक सुदी 9 संपन्न थये, ।। शुभमस्तु ।।"

5. गुजराती में 'भगवान महावीर स्तंभ' दर्ज है।

6. सबसे नीचे ही नीचे, 3 फीट 10 इन्च लम्बी और 9 इन्च मोटी पट्टी पर अंग्रेजी में लाल अक्षरों में भगवान् महावीर के उपदेश (Teachings of Lord Mahavir) लिखा हुआ है और फिर भगवान् महावीर के उपदेश क्रम 1 से 6 तक अंग्रेजी भाषा में काले अक्षरों में बने हुए हैं।

Teachings Of Lord Mahavira

1. Religion is the highest bliss. Religion means non-violence, restraint and penance. Even gods law before him who is firm in religion.
2. Forgiveness, Contentment, Simplicity and modesty are four entrances to religion.
3. Humility is the root of religion.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

4. Their own life is dear to all creatures. Pleasures are delightful and pains distasteful to all. Death is unpleasant and living dear to all. All creatures wish to live. Somehow, living is pleasant. Hence, do not kill any creature.

5. A wise man, knowings the pangs of the world, never commits sins.

6. In fact, attachment is said to be Parigraha.

Do not hoard though you have excess of anything. Keep aloof of all attachments.

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट 4

विविध-कार्य

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति माउण्ट आबू ने जो साहित्यिक, सामाजिक और सार्वजनिक कार्य सम्पादन किये, उनका उल्लेख सविस्तार इस पुस्तक के अन्तिम भाग में और परिशिष्ट 3 में भगवान् महावीर स्तंभ में किया गया है। तत्पश्चात्, समिति के विविध कार्य का विवरण देना शेष रह जाता है। जिसमें 1. श्री महावीर रिलीफ फण्ड, 2. श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष, 3. श्री महावीर कला कक्ष, और 4. तृतीय आबू पर्वत शरद् समारोह की प्रदर्शनी में 'महावीर कक्ष' का आयोजन सम्मिलित है। समिति ने अहिंसा-प्रकार का काम भी किया है।

1. श्री महावीर रिलीफ फण्ड समाज के निर्धन, निःसहाय और गरीब लोगों की जीवनोपयोगी कार्यों में सहायता पहुँचाने के उद्देश्य से स्थापित किया गया। समिति इस कार्य के लिए, समुचित धन संग्रह नहीं कर सकी, फिर भी भगवान् महावीर ने जो दान की महिमा वर्णित की है, उसके अनुमोदनार्थ, सांकेतिक सहायता पहुँचाई गई है। माउण्ट आबू के ब्लाईण्ड रिहेबिलेटशन (अन्ध पुनर्वास) केन्द्र के निर्धन प्रशिक्षणार्थियों को 50 ऊनी स्वेटर खादी भण्डार से खरीद कर दिये गये जिसमें समिति के रु. 360) खर्च हुए। इसी प्रकार आबू के जनरल होस्पिटल के रोगियों के लिए 6 ऊनी कम्बलें खरीद कर दी गई जिसमें 294) रुपये की रकम का सद्व्यय हुआ। इस प्रकार कुल रकम रुपया 654) श्री महावीर रिलीफ फण्ड में लगी।

2. श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष समिति ने सांस्कृतिक और पर्वतीय नगरी आबू में जैन साहित्य विशेषकर भगवान् महावीर के जीवन उपदेश की ओर जन साधारण की रुचि बढ़ाने हेतु, यह निश्चय किया कि नगर पालिका आबू पर्वत पर 'भगवान् महावीर कक्ष' स्थापित किया जावे

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

ग्रौर इस कार्य में, समिति का श्री शान्तिसदन ट्रस्ट के श्री देवाजी महाराज की प्रेरणा से, 5000 रु. की रकम, कुछ वर्षों पूर्व पुस्तकालय के लिये नगरपालिका में जमा थी, वह भगवान् महावीर कक्ष के लिये उपयोग में लाई गई। नगरपालिका ने एतदर्थ महावीर कक्ष के लिये लोहे की अलमारियाँ ग्रौर पुस्तकें खरीदी हैं ग्रौर समिति ने भी कुछ कीमती पुस्तकें रुपया 238)25 में खरीद कर श्री महावीर पुस्तकालय कक्ष को भेंट की है जिनमें से 'सम्मरण-सुत्त'' 'श्रमरण भगवान् महावीर' (अंग्रेजी भाग 1-5) विशेष महत्व की हैं। श्री देवाजी महाराज शान्ति सदन ने भी 'तीर्थंकर भगवान् महावीर चित्र संपुट' नाम की मूल्यवान् पुस्तक भेंट की जिसमें भगवान् महावीर के जीवन ग्रौर उपदेश को रंगीन चित्रों में प्रदर्शित किया गया है।

3. श्री महावीर कला-कक्ष—प्राचीन ग्रर्बुद (ग्राबू) पर्वत ग्रौर प्रदेश में, जैन स्थापत्य के कई भूतल भग्नावशेष हैं। विशेषकर पुरातन समृद्धिशाली चन्द्रवती विध्वंस जैन नगरी में ऐसी कई कलाकृतियाँ ग्रौर मूर्त्तियाँ मिली हैं, उनका संग्रह भगवान् महावीर के नाम से कला-कक्ष कायम होकर, उसमें किया जावे। यह योजना ग्राबू पर्वत पर ही कार्यान्वित हो, ऐसा समिति का सुझाव रहा है। एतदर्थ, समिति ने राजस्थान के पुरातत्व ग्रौर ग्रजायबघर विभाग के संचालक महोदय को ग्राबू पर्वत की राजकीय कला-वीथिका में चन्द्रावती की प्राचीन खंडित जैन मूर्त्तियों का संग्रह करा भगवान् महावीर के नाम से कला-कक्ष खोलने का सुझाव प्रस्तुत किया। ऐसा मालुम हुग्रा है कि राजकीय कला वीथिका में प्राचीन सुन्दर कलात्मक भग्नावशेष लाये जा रहे हैं। ग्राशा की जाती है कि राजकीय कला वीथिका ग्राबू पर्वत पर, भगवान् महावीर के नाम से राज्य सरकार कला कक्ष खोले जिससे देश ग्रौर विदेश के पर्यटक, प्राचीन सुन्दर ग्रौर उत्कृष्ट जैन कला के नमूनों को देख कर, ग्राबू के प्राचीन साँस्कृतिक गौरव की ग्रनुभूति कर सकें। समिति इस दिशा में केवल सुझाव ही देने में ग्रग्रसर रही है। भविष्य में, समिति इस ग्रोर प्रगति की कामना करती है।

ग्रन्तिम समिति ने, तृतीय शरद् समारोह के ग्रन्तर्गत जो प्रदर्शनी माउण्ट ग्राबू पर 21ग्रक्टूबर से 15नवम्बर तक ग्रायोजित हुई उसमें 'महावीर-

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

कक्ष' लगाया और उसमें आगन्तुक यात्रियों और आबू के नागरिकों को, भगवान् महावीर के जीवन प्रसंग के रंगीन चित्रों का प्रदर्शित किया एवं विश्व-विख्यात देलवाड़ा जैन मन्दिर के कुछ प्राचीन भग्नावशेष कलाकृत नमूने भी महावीर कक्ष में दर्शनार्थ रखे गये। महावीर कक्ष में श्री कान्ती रांका, प्रेस फोटोग्राफर, सादड़ी ने भी कई कलात्मक सुन्दर चित्र प्रदर्शित करने के लिये दिये जिससे महावीर कक्ष की शोभा में चार चाँद लग गये। इस अवसर पर, देलवाड़ा जैन मन्दिर से, ट्रक वाहन पर सुन्दर जैन संस्कृति प्रतीक झांकी भी सजा कर, 21-10-1975 को, तृतीय शरद् समारोह के उपलक्ष में विशाल शोभा-यात्रा (सवारी-जुलूस) में सम्मिलित होने के लिये, राजपूताना क्लब ले जाई गई। शरद् समारोह सवसर पर, जैन संस्कृति प्रतीक झांकी और प्रदर्शनी में महावीर कक्ष, के संचालन में 430)50 रुपया समिति का व्यय हुआ।

अहिंसा-प्रचार के लिये, समिति ने आबू पर्वत की मुख्य सड़कों पर, शिकार और वन-वृक्ष काटने के रोक बावता बोर्ड लगवाये जिसमें रुपया 363)50 खर्च हुए।

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति को कार्य संचालन करने में श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढ़ी देलवाड़ा के कर्मचारियों की पूरी सहायता मिली जिसके लिये समिति उनका आभार मानती है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट-5

जैन ध्वज की विशिष्टता

जैन समाज का यह सर्वमान्य ध्वज पंच परमेष्ठी का प्रतीक रूप-पांच रंगों में प्रदर्शित किया गया है—

ध्वज के पांच रंगों की पहचान इस प्रकार है—

लाल रंग..................सिद्ध

पीला रंग..................आचार्य

सफेद रंग..................अरिहंत

हरा रंग..................उपाध्याय

काला रंग ....साधु

ध्वज के उपरोक्त पांच रंग, पांच महाव्रत रूप से भी इस प्रकार सूचक हैं—लाल रंग........ सत्य, पीला रंग........ अचौर्य, सफेद रंग........ अहिंसा, हरा रंग........ब्रह्मचर्य, और काला रंग........अपरिग्रह। पंच परमेष्ठी में अर्हंत और महाव्रत में अहिंसा का विशेष महत्त्व होने से, सफेद रंग को मध्य में रखा गया है।

ध्वज के बीच में चतुर्गति प्रतीक रूप स्वस्तिक को दर्शाया गया है। स्वस्तिक के ऊपर तीन बिन्दु है जो सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र के सूचक हैं। तीन बिन्दुओं के ऊपर अर्द्ध चंद्र सिद्धशिला को लक्षित करता है और अर्द्ध-चन्द्र के ऊपर एक बिन्दु है जो मुक्त जीवन अर्थात मोक्ष का सूचक है।

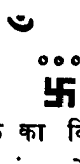

जैन संस्कृति में स्वास्तिक का विशेष महत्त्व है अतः इसको ध्वज के बीच में रखा गया है। चतुर्गति संसार में परिभ्रमण का कारण है और इस से आगे बढ़ कर अहिंसा को आचरण में लाने और अर्हन्त को हृदय से अपनाने पर, निर्वाण की प्राप्ति की जा सकती है।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जैन ध्वज का रंग और आकार निम्न प्रकार का है—

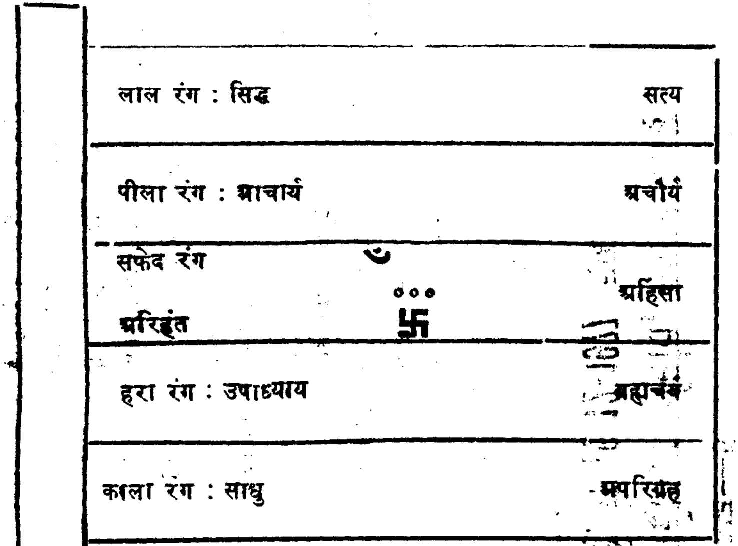

नोट : 1. ध्वज का आकार : लम्बा चोरस
2. लम्बाई—चौड़ाई : 3 × 2
3. लाल, पीला, हरा, काला रंग की पट्टियाँ समान
4. सफेद रंग की पट्टी : प्रत्येक दूसरे रंग की पट्टी से दुगुनी
5. स्वस्तिक का रङ्ग केशरिया।

जैन ध्वज और जैन प्रतीक का विवरण 'भगवान महावीर 2500 वाँ निर्वाण महोत्सव' माहिती विशेषांक पृष्ठ 367-369-370 से साभार अनुदित।

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

परिशिष्ट—5

भगवान् महावीर 2500 वां निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू, तारीख 5-1-1975 ई. से 16-12-1977 तक

लेखा--विवरण

जमा

रु. पैसे	
264)00	श्री सदस्यता शुल्क खाते समिति के सदस्यों से
13827)00	श्री सहाय फण्ड खाते रु. 101 या उससे अधिक धन राशि भेंटकर्ताओं से ।
501)	रु. श्री गौतम भाई सी. शाह अहमदाबाद ।
501)	रु. श्री पुखराजजी हीराचन्दजी, सादड़ी ।
501)	रु. सेठ श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढी, सिरोही ।
501)	श्री जोधसिंह मेहता, उदयपुर

खर्च

रु. पै.	
19190)20	श्री महावीर स्तम्भ नक्खी झील माउण्ट आबू खाते
430)50	श्री महावीर कक्ष तृतीय आबू शरद् समारोह प्रदर्शनी खाते
238)25	श्री महावीर पुस्तकालय, आबू पर्वत खाते
654)00	श्री महावीर रिलीफ फण्ड अनुकम्पा दान खाते
363)50	श्री अहिंसा प्रचार खाते
51)20	'भगवान् महावीर और आधुनिक युग' निबंध प्रतियोगिता खाते
6)00	साहित्य प्रकाशन श्रमण परम्परा की रूपरेखा पुस्तक प्रकाशन खाते

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat
www.umaragyanbhandar.com

जमा

रु. पै	
501)	रु. गुरु श्री शान्तिसदन ट्रस्ट, आबू श्री देवाजी महाराज से।
301)	श्री सरूपचन्दजी दूगड़, अहमदाबाद
1000)	सेठ श्री कस्तूरभाई, लालाभाई अहमदाबाद
251)	खेलशंकरजी दुर्लभजी, जयपुर।
500)	डा. एच. एम. पोरवाल, बाबची महाराष्ट्र
201)	श्री कँवरसेनजी जैन, आबू।
1001)	श्री रामचन्द्रजी जैन कान्ट्रेक्टर, आबू।
250)	श्री राजरूपजी टांक, जयपुर।
250)	श्री विमलचन्दजी सुराणा, जयपुर।
121)	श्री अमरचन्दजी हीराचन्दजी, जयपुर।
251)	श्री अभयकुमारजी मांडिया, जयपुर।
501)	श्री रिषभचन्दजी पुंगलिया, जयपुर।
400)	श्री हिम्मतसिंहजी गलुंडिया, जयपुर।
501)	श्री शिवसिंहजी गलुंडिया जयपुर।
2500)	श्री शान्तिदेव सेवा समिति, बम्बई।
51)	श्री भगवान् महावीर 2500 वाँ कल्याणक महोत्सव समिति, उदयपुर।
301)	रु. शाह श्री दलीचंद नानचंद नवसारी

खर्च

रु. पै.	
425)25	स्टेशनरी, रसीद बुकें और विज्ञप्तियाँ
93)85	यात्रा खर्च खाते
126)10	पोस्टेज खाते
87)60	परचुरण खाते
1009)00	श्रमण संस्कृति पुस्तक छपवाई उसके अर्चना प्रकाशन, अजमेर को चुकाये
22675)45	
244)51	श्री पोते बाकी जमा
22919)96	232)06 आज ता. 22/6/78 तक दी सिरोही कॉ. लि. बैंक आबू में जमा हैं
	12)45 केश बुक में है कोषाध्यक्ष के पास

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जमा

रु.

101) श्री गेंदालालजी, जयपुर
" " योगेश कुमारजी, जयपुर
201) " मालीरामजी, जयपुर
" " राजकुमारजी, जयपुर
" " चुन्नीलालजी, जयपुर
" " नरेन्द्रकुमारजी, जयपुर
" " लालचन्दजी, जयपुर
" " इन्द्रजी, जयपुर
101) " भरतभाई मोहनलाल कोठारी,
अहमदाबाद
101) श्री भरत भाई दलाल, अहमदाबाद
301) " शंकरलालजी नागरेचा, राजस्थान
ज्वेलर्स, आबू
201) श्री घनश्यामजी पामेचा, आबू
125) " जैन मैत्री संघ, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली
101) " कुशालसिंहजी गलुंडिया, जयपुर
101) " चम्पकलाल अमीचन्द भाई, भावनगर

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

जमा

रु.	
251)	" जौहरीलालजी पटवा, जैतारण
101)	" वीरचन्दजी हजारीमलजी, शिवगंज
101)	" पन्नालालजी झवेरी, अहमदाबाद
13827)00	
8507)25	श्री यात्रीगण खाते रुपया 101) से कम धन-राशि भेंटकर्ता यात्रियों से
321)71	ब्याज बट्टा खाते, दी सिरोही डिस्ट्रिक्ट कोमर्शियल को-ओपरेटिव बैंक लि. माउण्ट आबू से
12919)96	कुल योग

निरीक्षक

ह० बाबूलाल शाह, मुनीम, श्री
देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर,
माउण्ट आबू
कोषाध्यक्ष, भगवान् महावीर 2500 वाँ
नर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट आबू

ह० मणीलाल नरसीराम लेखापाल
सेठ श्री कल्याणजी परमानन्दजी पेढी
देलवाड़ा माउण्ट आबू

ह० जोधसिंह मेहता, चीफ मैनेजर,
श्री देलवाड़ा श्वेताम्बर जैन मन्दिर,
माउण्ट आबू
मंत्री, भगवान महावीर 2500 वाँ
निर्वाण महोत्सव समिति, माउण्ट, आबू

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com

"भगवान् महावीर 2500वाँ निर्वाण महोत्सव समिति आबू पर्वत की ओर से जो भी कार्य हुआ इसमें दानदाताओं का योगदान तो है ही इसके अलावा इस समिति के अध्यक्ष स्व. श्री जोधसिंह मेहताजी का विशेष एवं उल्लेखनीय योगदान रहा। आप मन, वचन व कर्म से जीवन पर्यन्त महावीर भक्त रहे। आपने इस अधिक उम्र में चीफ मैनेजर श्री देलवाड़ा जैन मन्दिर के कार्य की व्यस्तता के उपरांत अथक परिश्रम कर महावीर स्तम्भ का निर्माण गांधी वाटिका, नक्की झील आबू पर्वत पर करा कर महावीर भक्ति व कर्त्तव्यपरायणता का परिचय दिया।

पुस्तक आपके हाथों ही लिखी गई; किन्तु दुःख है कि छप कर आने से पहले आप इसे देख न सके और स्वर्ग सिधार गये। उन्हें समिति के सदस्यों की ओर से श्रद्धाञ्जलि अर्पित है।"

Shree Sudharmaswami Gyanbhandar-Umara, Surat www.umaragyanbhandar.com